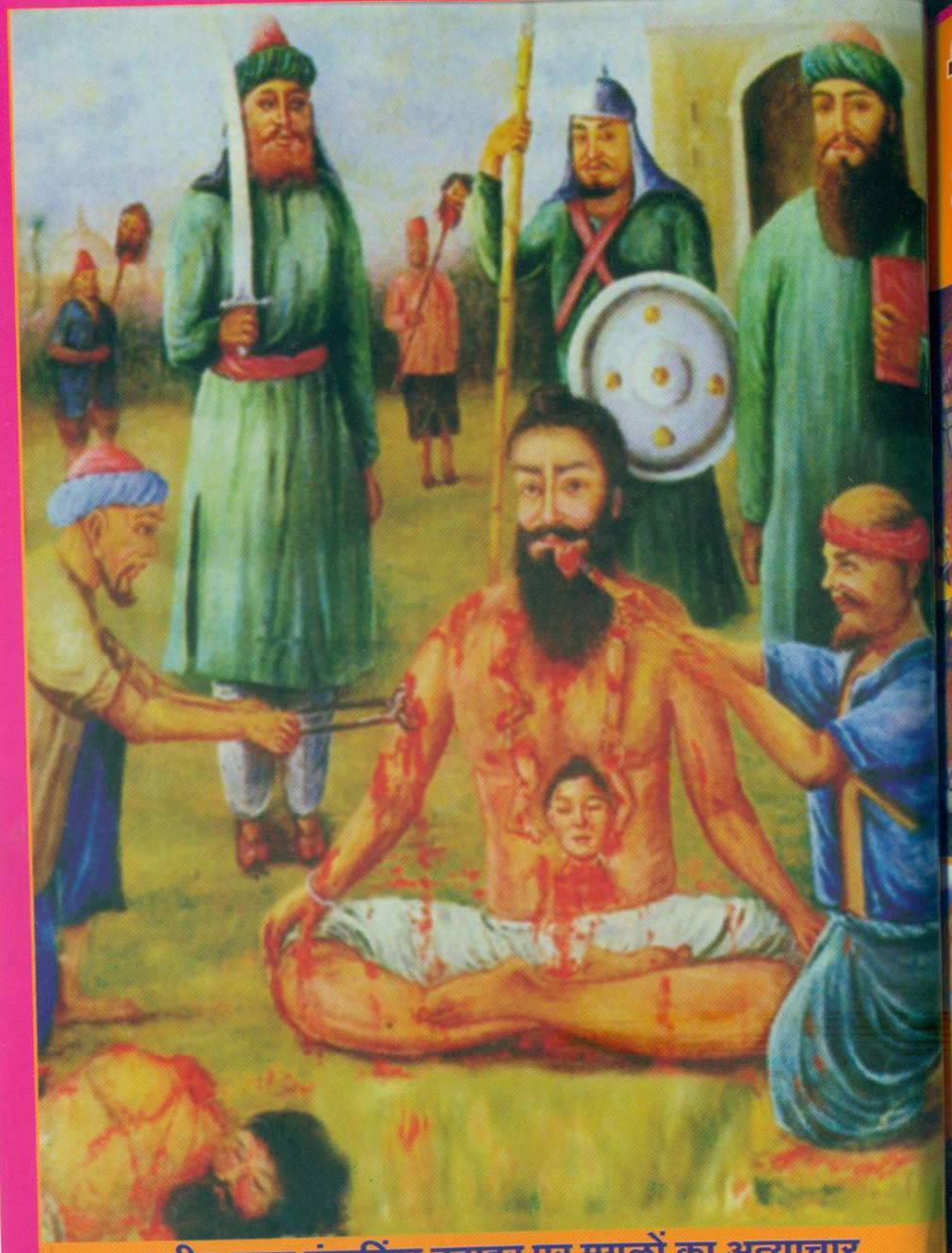

शहीद बाबा बंदासिंघ बहाद्दर पर मुगलों का अत्याचार

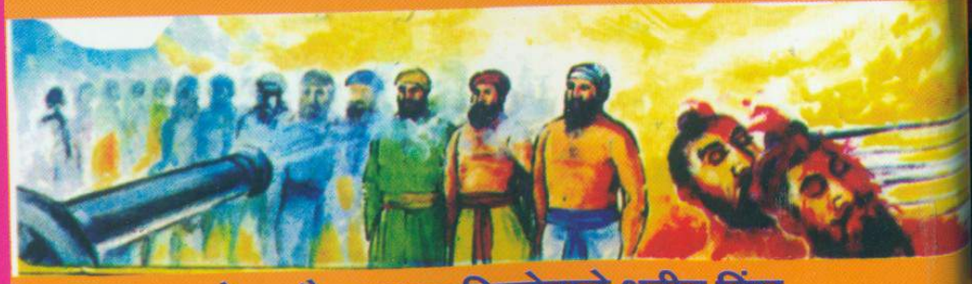

देश कौम पर मर मिटनेवाले शहीद सिंघ

सिक्खों की कुर्बानियाँ और उनका इतिहास सचित्र

तारासिंघ गोरोवाडा

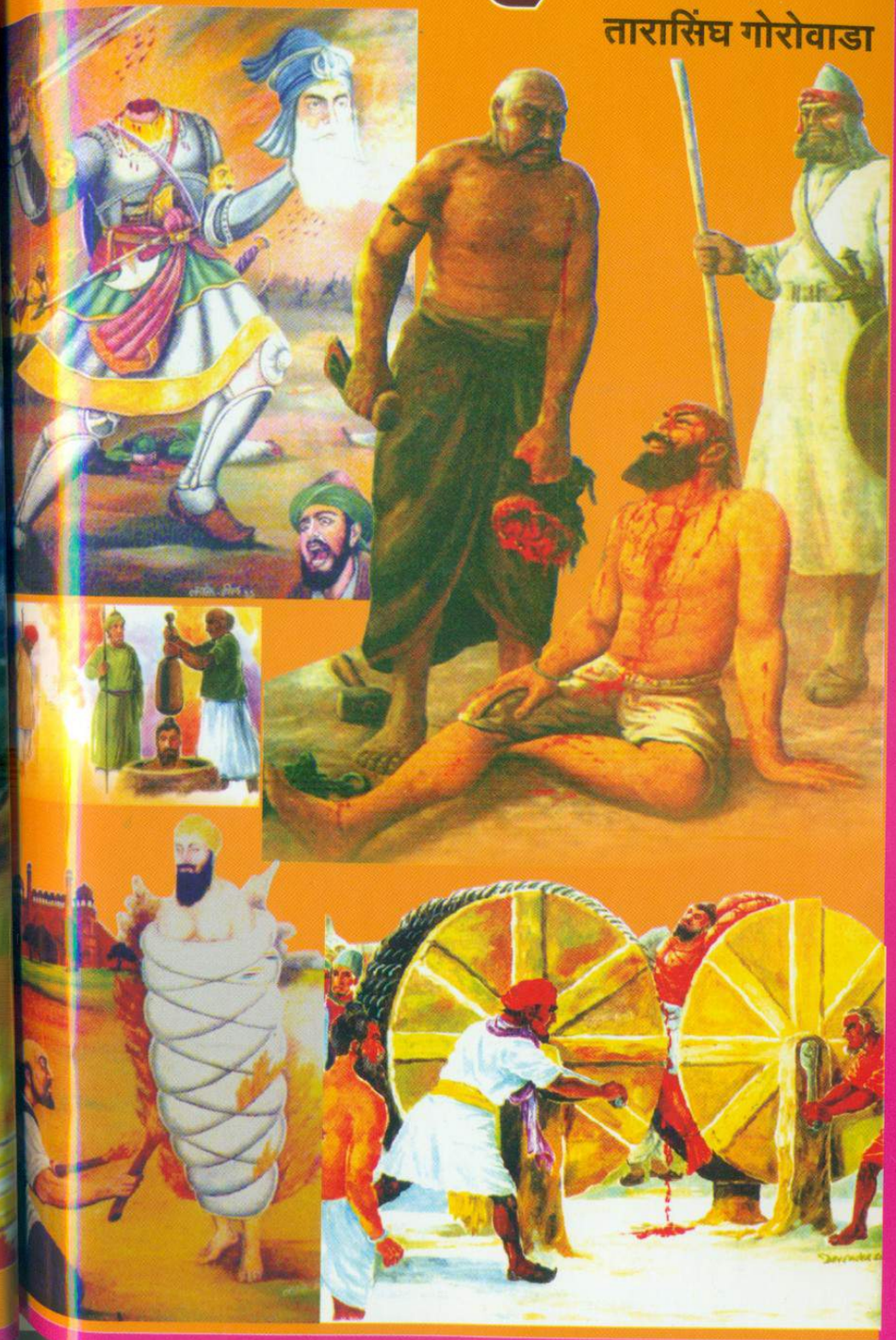

सिक्खों की कुर्बानियाँ और उनका इतिहास

सचित्र

संग्रह कर्ता
तारासिंघ गोरोवाडा

- सिक्खों की कुर्बानियां और उनका इतिहास
तारासिंघ गोरोवाडा

- प्रकाशक -

सिख धर्म प्रचार कमिटी

तारासिंघ गोरोवाडा

गुरुनानक मार्ग, राजमुद्रा गृहरचना,
सी ब्लॉक १ के सामने, १०३७ धनकवडी,
पुणे ४११०४३.

- मुद्रक -

मल्हार प्रिंटर्स

७०८, घोरपडे पेठ, घोरपडे उद्यान समोर,
पुणे ४११ ०४२.

- मुखपृष्ठ -

बैजनाथ कोकणे

मोबा. : ९९२२७६१२०७

- अक्षर जुळणी -

कोमल एंटरप्राईजेस

सौ. स्मिता खेडेकर

धनकवडी, जवाहर बेकरी शेजारी,
पुणे ४११ ०४३.

- आवृत्ती -

प्रथमावृत्ती जानेवारी २०१३

- मूल्य - **सप्रेम भेट**

चरणों में अर्पण

ये पुस्तक उन शहीद सिंघ सिंघनियों के चरणों में अर्पण है जिन्होंने अपने धर्म, अपनी अनख और देश के लिये अपने आप को बली वेदी पर न्यौछावर कर दिया । सिख इतिहास को पढने से पता लगता है कि सिख विरांगनाएं माताओं ने अपने बच्चों के टुकडे करवा करवाकर अपने गले में हार पहिने लेकिन सिखी की मर्यादा को आंच न आने दी । धन्य है वो शहीद तथा शहीद सिंघ, विरांगनाएं उन्हे मेरा कोटि कोटि प्रणाम ।

- तारसिंघ गोरोवाडा

संग्रहकर्ता का मनोगत

बडे दिनों से मेरे मन ये उत्कंठा थी कि सिखों का इतिहास जो कुर्बानियों से भरा पडा है ये इतिहास सिखों के घरों में पहुंचे । आज कल हमारे बच्चे अंग्रेजी का शिक्षण प्राप्त करते है । तो उनको इतिहास की किताबें अंग्रेजी में कम प्राप्त होती है । अगर मिलती भी है तो पंजाब में मिलती है । या गुरुमुखी लिपी में मिलती है । क्यों न कोई ऐसे कदम उठाया जाये जिससे हमारा इतिहास हमारे बच्चों को प्राप्त हो सके और भारतीय जनता को भी सिख इतिहास का ज्ञान हो सके । गुरमति ज्ञान पढते हुए मेरे मन में ये इच्छा प्रगट हुई क्यों न इनमें की कहानियां लेकर और लोगों तक पहुंचाई जाए इसलिये मैने ये जो घलत कदम उठाया जिन जिन लेखकों की कहानियां थी उन्ही के नाम से छापी और जिस किताब की कहानी है उस किताब का नाम लिखा । मैं ये समझता हूं कि ये घलत काम है पर मैं या हमारी कमेटी कोई नफा नही ले रही हम ये किताब बिना मूल्य दे रहे है । आशा है मेरी घलती को लेखकजन क्षमा करेंगे ।

आपका गुन्हेगार
तारासिंघ गोरोवाडा

अनुक्रमणिका

अ.क्र.	लेख	लेखक	पृष्ठांक
१.	शहीदी गुरू अरजनदेव जी की	जगजीवन, मोहन वालिया	०७
२.	संदेश गुरू तेग बहादर की शहादत के मौके पर	संत हरचंद सिंघजी	१२
३.	गुरू तेग बहादरजी की शहादत	प्रो. समशेर सिंघ (एम.ए.)	१४
४.	बंद बंद कटवाने वाले : शहीद भाई मनिसिंघजी	श्रीमती शैल वर्मा	१८
५.	शहीदभाई मतीदासजी, भाई दिआला जी और भाई सतीदासजी	डॉ. निर्मल कौशिक (पंजाब)	२०
६.	बाबा दीपसिंघजी शहीद	श्रीमती शैल वर्मा (गुरदासपूर)	२६
७.	शहीद भाई सुबेगसिंघ-- भाई शाहबाजसिंघ	सिमरजीत सिंघ	२८
८.	चार साहिबजादों की लासानी शहादत	स. गुरप्रीतसिंघ	३५
९.	सरहंद का साका	तारासिंघ गोरोवाडा (जाचक)	४०
१०.	शहीद भाई तारूसिंघजी	तारासिंघ गोरोवाडा	४३
११.	शहीदभाई बोतासिंघ और गरजासिंघ	तारासिंघ गोरोवाडा	४४
१२.	शहीद सुखासिंघजी स. महिताबसिंघजी	तारासिंघ गोरोवाडा	४८
१३.	एक सिख बच्चे की शहादत	तारासिंघ गोरोवाडा	५१
१४.	जात-पात और सिक्ख धर्म	ज्ञानी महिंदर सिंघ	५३
१५.	परोपकारी सिक्ख विरसे की लासानी दास्तां : बडा घल्लूधारा	प्रो. सुरिंदर कौर	५६
१६.	शहीद बंदासिंघ बहादर के समय के हालात	स. बचितरसिंघ, स. बहादरसिंघ	६८
१७.	सतारवी और अठारवी सदी के सिख शहीद	हरबंससिंघ चावला	७३

॥ १ ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

सिख धर्म प्रचार कमिटी, पुणे.

१०३७ धनकवडी, पुणे ४११०४३
नोंदणी क्र. ई ४५५७ पुणे.
तारीख २६.४.२००६

सन्माननीय सदस्य

१. अध्यक्ष : सरदार गुरनामसिंघ जैमलसिंघ होरा
२. कार्याध्यक्ष : सरदार तारासिंघ गु. गोरोवाडा
३. खजिनदार : सरदार कुलजितसिंघ अत्तरसिंघ चौधरी
४. : सरदार चरणजितसिंघ जसवंतसिंघशाहनी
५. : स्व. विनायक लिमये
६. : सरदार इकबालसिंघ ता. गोरोवाडा

१. शहीदी गुरू अरजनदेव जी की

- जगजीवन, मोहन वालिआ

सिखों के पांचवे गुरू अरजनदेव जी सिखों को संगठित करनेवाले और शहीदी प्राप्त करनेवाले पहिले गुरू थे । गोकुलचंद नारंग लिखते हैं किसी किसम की जथेबंदी अपने आप एक व्यक्ति के राज्य के लिये खतरा होता है । गुरू अरजनदेवजी की अगवाई में सिखों की उभरती कौम का संघटन अपने आप में ही गुरू साहिब तथा मुगलशाही पर कहर टूटने के लिये काफी है । बादशाह जहांगीर कटर सुन्नी मुसलमान दरबारियों की सहायता से सिंहासन पर बैठा था । जहांगीर उनके प्रभाव में दबा हुआ था । इसलिये जहांगीर का व्यवहार अपनी सिंहासन पर बैठने के कुछ साल तक कुढ रहा था ।

बादशाह जहांगीर अपनी आत्मकथा तुजकी जहांगिरी में लिखता है बियास दर्या के किनारे पर बसे एक नगर गोईदवाल में साधु संतों के भेस में एक हिंदु रहता था । उसने बहुत से हिंदुओं में यहां तक कि कुछ बेसमझ नीची श्रेणी के मुसलमानों को भी अपने तरफ करके अपने पंथ की रीतिरिवाजों पर चलने के लिये फसा लिया था । अपनी साधुता और आत्मिक अगवाई में बडचढकर ढिंढोरा पीटता था । उसे लोग गुरू कहते थे, और हर तरफ से लोग उसकी शरण में आकर उसके अनुयायी बन रहे थे । उस की इस दुकानदारी को बंद करने का या उसे मुसलमान बनाने की सोच रहा था, कि खुसरो उस तरफ से निकला मूर्ख शहजादा उसके पिछलगों में शामिल होने की सूझी । वो गुरू के निवासस्थानपर पहुंचा और उससे मुलाकात की । गुरू ने उस के साथ कुछ पुराने मामलों पर विचार किया और अपनी उंगली से उसके माथे पर एक टिक्का लगाया । हिंदु जिसे तिलक कहते हैं और इसे शुभ शगुण समझते हैं । इस मामले की खबर मुझे दी गई । मैं गुरू के झूठे धर्म को पहले से ही जानता था । "मैने उसकी गिरफ्तारी का हुकम दे दिया एवं उसके परिवार घर बार मुरतजां खां के हवाले कर दिया । मैने उसकी पूरी

जायदाद जप्त करने के लिये तथा उसे कैद करके अति कष्टदायक सजा देकर मौत के घाट उतार देने का हुक्म दे दिया ।''

इससे प्रतीत होता हैं कि जहांगीर गुरू अरजन देव जी का अंत करने पर तुला हुआ था । दो कारण अंत को करीब ले आये जहांगीर के पुत्र शहजादा खुसरोंने अपने पिता के राजसिंहासन पर बैठने से उसके विरुद्ध बगावत कर दी थी । वो गुरुजी कीं सेवा में गोईदवाल आया और गुरुजी का आशीर्वाद लिया । जहांगीर लिखता है कि गुरूजी ने उसके माथे पर जाफरान का निशाण लगाया । जिसे हिंदु तिलक कहते हैं एवं शुभ मानते हैं । मोहसन फानी दबिसताने महजब में लिखते हैं कि गुरू अरजन देवजी ने उसकी भलाई के लिये प्रार्थना की थी । पर मैकालिफ कहता है कि गुरूसाहिबने उसे कुछ हजार रुपये शहजादे को दिये थे । कि उसके काबूल में जाते समय काम में आये । इस से ये प्रत्यक्ष होता है कि गुरूजी ने खुसरो की बगावत के समय उसका पक्ष लिया होता तो जहांगीर इस बात का जरूर वर्णन करता । दूसरी बाजू वे केवल लिखता है गुरूजी ने शहजादे के माथे पर तिलक लगाया । तिलक लगाने का ये भाव नही गुरूजी ने उसको बादशाही का वर्दान दिया था । भगोडा शहजादा गुरूजी की सेवा में हाजर हुआ हो और गुरूजी ने विशेष व्यक्ति समझकर माथे पर तिलक लगाया हो । जे अगर हम मोहसनफानी के लेख माने तो कि गुरूजी ने खुसरो की भलाई के लिये प्रार्थना की इस का मतलब ये नहीं की सुरक्षा के लिये प्रार्थना की क्योंकि उसका पीछा किया जा रहा था । एवं उसकी जान खतरे में थी । संतो का तो काम ही है सभ का भला मांगना । शहजादा खुसरों की बगावत में गुरूजी का कोई हाथ नहीं था बल्कि खुशामगीरों ने तोड मरोडकर बादशाह के कान भरे गुरूजी को राजकारणी कह के शहीद नही किया गया । वे तो जहांगीर की कटरता का शिकार बने । गुरूजी ने कोई राजनीति के कारण खुसरों को शरण नही दी थी । एक संत के लिये दुखी शहजादे के लिये शरण देना उचित था । क्यों कि उसकी जान को खतरा था । खुसरों को शरण देने के मामले को जहांगीर ने गुरूजी के विरुद्ध कारवाई करने का बहाना ही बना लिया । चंदूशाह जहांगीर के समय में उंच पदवीपर था गुरूजी के साथ जाती दुश्मनी रखता याने बादशाह के वजीरों ने कान भर के जलती अग्नी पर तेल डालने काम कर

किया ।

सिख इतिहासकारो अनुसार चंदु शाह वित मंत्री की एक लडकी थी । जिस को वो एक सन्मानित खत्री नौजवान के साथ ब्याहना चाहता था । उसने समय के अनुसार एक ब्राह्मण एक नाई को लडकी के लिये एक योग्य वर खोजने के लिये भेजा । कुछ समय बाद उन्होंने वापिस आकर चंदू शाह को बताया कि गुरू अरजनदेव जी के सुपुत्र हरिगोबिंदजी आपकी सुपुत्री के लिये योग्य वर है । वित मंत्री चंदू शाह को अपनी पदवी का घमंड था ने गुरूजी की शान में कुछ तुच्छ अपशब्द इस्तेमाल करते हुए कहा था तुम गुरूजी हैसियत को मेरी बराबरी में तोल रहे हो? उनका गुजारा दानभेटा से होता है जो कि जीवन को गुजारने के लिये बे पतवाला ढंग है । पर चंदुशाह की पत्नि ने उसे गुरूजी के सुपुत्र से ब्याह करने के लिये राजी कर लिया इसलिये चंदूशाह ने गुरू जी के पास संदेशा भेजा आपके पुत्र का विवाह मेरी पुत्री से कर दे । इसी समय में किसी ने गुरूजी से उनके विरुद्ध चंदुशाह ने कहे हुए शब्द बताये इन शब्दों की वजह से सिखोने गुरूजी को सलाह दी कि वो चंदुशाह की पेशकश को ठुकरा दे । गुरूजी ने चंदुशाह की रिश्ते की पेशकश को ठुकरा दिया । इसी कारण चंदूशाह गुरूजी का जानी दुश्मन बन गया । जब बादशाह लाहौर आया, चंदू ने गुरूजी के शहजादा खुसरो को सहायता देने के बारे में बादशाह के कान भर दिये ।

जहांगीर गुरूजी के विरुद्ध उनकी धार्मिक कार्यों के कारण उनपर कारवाही करना चाहता था । जब चंदू ने बताया कि गुरूजी ने खुसरों की रुपयों से सहायता की और उसकी सफलता के लिये प्रार्थना की उसने गुरूजी को बुला भेजा । वो पंजाब में इसलिये आया था कि खुसरों के साथियों को सजा दे सके । बादशाह ने गुरूजी को २ लाख रुपये जुरमाना लगा दिया और गुरूजी से कहा कि वो गुरू ग्रंथ साहिब में से मुसलमानों के विरुद्ध शब्दों को निकाल दें । गुरूजी ने उत्तर में कहा कि जो रुपये मेरे पास है वो गरिबों और लाचारों के लिये हैं । जुरमाना देने के लिये नही है । एवं ये कहकर की गुरू ग्रंथ साहिब में से कोई भी शब्द निकालने से मना कर दिया । श्री गुरूग्रंथ साहिब में किसी भी जाती के विरुद्ध कुछ भी नही है । उसकी राह तो सरल एकता की है श्री गुरूग्रंथ साहिबमें तो मानवता के भाई चारे के विचार हैं ।

जहांगीर ने गुरूजी के इनकार करने पर उनकी जायदाद जप्त करनेवाली सजा इसी तरह की थी जो उस समय लगान न देने को लगाई जाती थी । डॉ. इंदू भूशण बैनरजी लिखते है ये दिखाई देता है कि गुरू अरजनदेव को लगान न देनेवाला दोषी कहता या उनकी जुरमाना अदा करने की अयोग्यता का इनकार करता और रिवाजनुसार कष्ट दने की सजा को जायज कहना उनकी मृत्यू के संबंध में दूसरी हालात को आखों से ओजल करना इस निर्णय प्रत्यक्ष करना जो इतिहास में बडी कठिनाई से ही माफ किया जा सकता है । कई लेखकोंनुसार एक हिंदु धनवान से चंदुशाह ने बादशाह को जुरमने की रकम अदा कर दी और गुरू अरजन को कष्ट देकर मारने की जिमेदारी खुद ले ली । ये कहा जाता है कि एक मुसलमान संत (फकीर) मियां मीर गुरूजी को छुडाने की कोशिश की परन्तु गुरुजी ने उन्हे कहा कि परमात्मा की मर्जीनुसार होने दो । गुरूजी अति कष्ट दिये गये उन्हे अग्निपर रखे गये बडे तवे पर बिठाया गया ऊपर से गरम रेट डाली गई उन्होंने अत्याचारियों से रावी नदी में स्नान करने की इजाजत मांगी । शहिदी ३० मई १६०६ ई.वी. को हुई । गुरूजी की शहीदी ने सिखो के इतिहास को नया मोड दे दिया । लतीफ लिखते हैं :- गुरू अरजनदेवजी की शहादत सिख कौम में एक बडा मौड है क्यों कि इसने सिखों के धार्मिक जजबे को उभारा गया । और इस समय मुसलमानी सत्ता के विरुद्ध घ्रिणा के बीज बो दिये जिससे गुरूनानक के बारे में वफादार अनुयायों के दिलों में एक गहरी खाई बन गई । गुरू अरजनदेवजी ने अपने सुपुत्र हरिगोबिंद को शहीदी से पहिले ही संदेश भेजा था कि अपने सिंहासनपर पूरी तरह हथियार पहन बैठो और अपनी सामर्थानुसार सेना रखो । और गुरू का तिलक अपने माथे पर पुराने रिवाजानुसार लगाये भाव ये था कि गुरू अरजनदेवजी की शहीदी ने सिखों को इशारा दे दिया । उन्होंने अपने घरबार को मोगल जालमों से बचाकर रखने के लिये हथियार बंध होना अब जरूरी है । उन्होंने गुरूजी की शहादत से ये सबक मिल गया कि राजनीतिक स्वातंत्राबिना मुक्ती प्राप्त करनी बडी कठिन है । मैकालिफ लिखते हैं कि गुरू अरजनदेवजी की शहीदी के थोडे समय बाद सिख गुरू धार्मिक नेता के स्थान धार्मिक एवं सैनिक नेता बन गया । गुरू हरिगोबिंदजी ने सेना तैयार की सिखों को वीरता के गीत गाने के आदेश दिये वे शिकार खेलने एवं

व्यायाम करने लग गये ।

गुरू अरजनदेवजी की शहीदी के कारण मोगलों से बदला लेने के जोश में बडोतरी हुई । मुगल सामराज्य ने उन पर जुलम करने आरंभ कर दिये । जितना मुगल उन पर जुलम करते थे उतना ही सिखों का कुर्बानी करने का जोश बडता था । अरजनदेवजी की शहिदी पहिली थी उसके बाद शहिदियां का सिलसिला शुरू हो गया । गुरू तेग बहादर जी भी शहीद हुए और गुरू गोबिंदसिंघजी ने अपना पूरा वंश कुर्बान कर दिया । अनगिनत सिख मोगलों के अत्याचार के शिकार हुए ।

गुरू अरजनदेवजी ने सिखों को संगठित किया और उन्हें हिंदु की मुख्यधारा से अलग कर दिया । गुरूज ो ने श्री गुरू ग्रंथ साहिब में अमृत बाणी के स्वरूप में कोई तबदिली करने नही दी । और आदेश ये दिया कि ये पवित्र बाणी ही सिख धर्म का आधार है । इससे प्रेरणा लेकर सचा पवित्र और उपकारी जीवन व्यतित करें ।

अनुवादक

तारासिंघ गोरोवाडा

सीस गंज के सौजन्य से

केस गुरू की मोहर है ।

नौजवान खालसा जी । जागो और संभालो अपना गौरव मई वैभव इतिहास को । गुरू गोबिंदसिंघ जी ने अपना सर्वस्व बलिदान कर के तुमें सरदारी बख्शी थी । आज तुम गुरू को छोडकर झूठे फैशन के पीछे लग कर अपनी सरदारी को स्वयं गवा रहे हो ।

साबत सूरत रब की भंने बेईमान ।

संदेश

गुरू तेग बहादर की शहादत के मौके पर

- संत हरचंदसिंघजी

संसार के इतिहास में अपने इष्ट, देश और कौम के लिये कुरबानी करनेवालों महान मनुष्यों का जिकर बार बार आता है और हर कौम, हर देश के लोगों को अपने शहीदों पर मान और फक्र होता है। पर नौवें नानक साहिब श्री गुरू तेग बहादर जी की शहादत शायद विश्व इतिहास में विलक्षण और अनोखी शहादत है जो उस मानवता और धर्म चिन्हों के लिये दी गई है जिन पर गुरू तेग बहादर स्वयं विश्वास नही थे करते।

इतिहास इस बात का साक्षी है कि साहिब श्री गुरू नानक देव जी ने बचपन में ही जनेऊ पहनने से इनकार कर हिंदु धर्म से अपने को विलक्षण का बांध बांध दिया था और फिर साहिब श्री गुरू तेग बहादर जी ने उसी जनेऊ की रक्षा के लिये बलिदान क्यों दिया?

श्री गुरू तेग बहादर जी की शहादत के बारे में साहिब श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी स्वयं लिखते है कि :-

तिलक जंजू राखा प्रभ ताका ।। कीनो बडो कलू महि साका ।। (५४)

स्पष्ट है कि गुरूसाहिब ने यह कुरबानी हिंदु धर्म और उसके चिन्ह तिलक और जनेऊ की रक्षा के लिये दी चाहे ये घटना इतिहास की एक अनोखी एवं विलक्षण घटना है। पर है ये सिक्ख सिद्धातों के अनुकूल।

गुरू नानक साहिब ने अकाल पुरुख से प्राप्त आदेश अनुसार जिस निरमल पंथ की नींव रखी थी और जिसे दशम नानक, साहिब श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने खालसे का नाम दिया था का बुनियादी सिद्धांत परोपकार है एवं मजलूम की रक्षा पर आधारित है। आपने धर्म और सिद्धांतो की रक्षा के लिये कुरबानी करनेवाले बहुत मिल जायेंगे पर बेगाने धर्म और उनके बाहरी चिन्हों बिना धर्म या किसी और के विरोध के लिये बेसहारों के लिये अपना शीश देने का काम सिर्फ गुरू नानक देवजी द्वारा निर्माण किया हुआ निरमल पंथ ही कर सकता है।

यही कारण था जब संपूर्ण भारत हिंदुओं के मंदिरों के साथ भरा परा

था और भारत की कुल अबादी से भी अधिक देवते धरती पर पूजे जाते थे। हिंदुओं ने भारत के हर कोने में मंदिरों के घंटा नाद किये। सूर्यवंश एवं चंद्रवंशी राजाओं के समक्ष विनंती की पर कोई देवी देवता या राजा सूर्यवंशी या चंद्रवंशी हिंदु धर्म की रक्षा के लिये अंग्रेजी हकुमत का शिकार होने या दिल्ली से टक्कर लेने कोई तैयार नही हुअे थे चुनौती केवल आनंदपुर के वासी ने कबूल की।

गुरू तेग बहादर और उनके सिखों की हुई शहादत ने भारत की सदियों के गुलाम लोगों में नया उत्साह और जोश भरा एवं वे गुरू गोबिंद सिंघ जी के झंडे के नीचे मानवी आजादी की तडफ ले कर इकट्ठे होने लगे। सिक्खि का आधार ही धर्म निरपेक्षता और सरबत हा भला है। सिक्खों ने हमेशा ही निराधार की रक्षा बेबसों की बाह थामी है और दूसरों के लिये कुरबानी दी है। खालसे के सृजनहार लिखते हैं :-

बांह जिना दी पकडिये । सिर दीजै बांह न छोडिऐ ।।
तेग बहादर बोलिआ । धर पइअै धरम न छोडीऐ ।।

आज भी जरूरत है सिक्ख गुरू नानक साहिब जी एवं महान सिक्ख शहीदों के पदचिन्हों पर चलते हुए सिक्खी रिवायतों एवं परमंपराओ पर अढिग रहना।

बेशक हम आज भी दिल्ली के ताजदारो के विरुद्ध अपनी आजाद हस्ती की रक्षा की। बाणी एवं बाणें की लडाई लड रहे हैं। वे लोग जिन्होने तिलक और जनेऊकी रक्षा के लिये श्री गुरू तेग बहादर जी ने अपना बलिदान दिया। आज दिल्ली के सिंहासन पर बैठकर गुरू तेग बहादर जी की सिक्खी को खत्म करने के नापाक सपने देख रहे है।

सभे सांझीवाल सदाइन ।। तू किसै न दिसहि बाहरा जीउ ।।
(श्री गु. ग्रं. प. ।।९७।।)

के महान असूलों पर पहरा देते हुए समूची मनुष्यता के भलै एवं मानवता के एकता के लिये रहना चाहिये।

हमारी आज भी जंग दिल्ली तख्त से है किसी फिरके या धर्म के विरुद्ध नही।

क्यों कि गुरू तेग बहादर की जंग इस्लाम से नही थी। दिल्ली के तख्त से थी। इसलिये हमे सभी को महान गुरू गुरू तेग बहादर साहिब के बलिदान दिवस पर प्रण करना चाहिये। हम अपने महान गुरूओं के दर्शाये महान आदेशों के लिये बडी से बडी कुर्बानी देने से कभी भी नही हिचकिचायेंगे।

* *

गुरू तेग बहादरजी की शहादत

- प्रो. शमशेर सिंघ, एम.ए.

तिलक जंजू राखा प्रभ ताका ।। कीनो बडू कलू महि साका ।।

गुरू तेग बहादर साहिबजी की शहादत एक अजीब किसम की शहादत है । इस की मिसाल दुनियां में नही मिलती क्यों कि अब तक कातिल तो शहीद के पास आया था पर कभी शहीद कातिल के पास नही गया । लाला दौलतराय अपनी पुस्तक "महाबली" इस शहादत के बारे में जिकर करते हुए कहा है कि हम 'उलटी गंगा' चलाई जा रहे हैं । कई समय से पढते आ रहे है परंतु गुरू तेग बहादर ने यह साबित कर दिया कि शहीद कातिल के पास जा कर शहीद हुए ।

इस शहादत की तुलना दुनियां की,
किसी घटना के साथ नही की जा सकती ।

शहादत अपने धर्म, सभ्याचार, इष्ट की रक्षा के लिये या कोई और समाजक हित कुरबानी तो की जा सकती है । परंतु ये शहादत अनोखी इसलिये है कि तिलक एवं जनेऊ दोनो वस्तुएं सिक्ख धर्म के चिन्ह नही थे, जिन चिन्हो की हिफाजत की गई है, शहादत अपने आप में बहुत बडी अैर अनोखी शहादत है । इसीलिये गुरू गोबिंदसिंघ जी ने इसे कलयुग में 'बडा साका (गाथा) कहा है । क्योंकि ये कुरबानी हिंदुस्तान की हिंदु जनता के हक्कों की रक्षा के लिये की गई है ।

बैनरजी इस शहादत के बारे में लिखते है कि ये स्वयं आप हो कर ये की गई शहादत है । (रिसर्च सकालर तख्त घटना साहिब दशम ग्रंथ पन्ना नं. ५४ । इस से बढकर महान शहादत हो ही नही सकती । कि उस धर्म के लिये कुरबानी देना । जिसमें स्वयं यकीन न रखते हो? सिक्ख धर्म के कर्ता गुरूनानक देवजी ने नौं साल की उम्र में जब पंडित हरदिआल जब जनेऊ पहनाने के लिये आये तब गुरू नानक देवजी ने ये धागे का जनेऊ पहनने से इनकार कर दिया था । क्योंकि ये जनेऊ सदैव काल का नही है । शरीर के खत्म होने पर इसकी अवधी खत्म हो जाती है । इसलिये ये जनेऊ बाहरी कर्म है । दिखावे का है बताया । अमर आत्मक जनेऊ, ब्रह्मचर्य और

सत वाला है । जो जीवन को अमरत्व प्रदान करता है । इस इनकार किये हुए जनेऊ की खातीर गुरू तेग बहादर साहिबने अपना सिर बलिदान कर दिया कि हिंदु धर्म रक्षा करना एक महाबली का धर्म है । डॉ. मेकालिफ ने इस को अलौकिक घटना कह कर संबोधित किया है । क्योंकि इस शहादत को तुलना किसी घटना से नही की जा सकती ।

गुरू तेग बहादर साहिब को ये कुरबानी करते हुए जरा भी झिझक नही हुई । क्यों कि शहीद को जिंदगी प्यारी नही होती अपना विश्वास प्यारा होता है । वो मौत में अपना विश्वास महसूस करता है क्योंकि शहीद मौत को भी जिंदगी महसूस करता है ।

गुरू गोबिंदसिंघ जीने इस शहादत को बडे सुयोग्य ढंग से वर्णन किया है कि शहीद धर्म की खातिर कुरबानीकरने से पहले ये विश्वास पैदा कर लेता है कि मेरी शहादत जनता के लिये अवश्य लाभदायक साबित होगी और जोश पैदा करेगी । जनता के साहस में वृद्धी होगी ।

गुरू तेगबहादर की शहीदी का कारण ये भी था कि गुरूजी बडे साहस और हिंमत के साथ प्रचार कर रहे थे । गुरूजी के प्रचार का विचार आत्मक अवस्था को ऊंचा उठाना था । वे चाहे किसी भी धर्म में रहकर किया जा सकता है । ये जरुरी नहीं था कि किसी शर्तो के बींच में सिख धर्म की प्रेरणा देते थे । भले सिक्ख धर्म अपने आप में एक संपूर्ण एवं सफल धर्म है जिसके कारण लोग हर रोज प्रभावित हो रहे थे ।

गुरू तेगबहादर साहिब पहिले गुरू थे जिन्होंने पंजाब से बाहर ढाका, आसाम, बिहार के लंबे दौरे आरंभ किये थे और गुरू नानक देव के मिशन का संदेश सभी को दिया था । उन्होंने अपने प्रचार के दरम्यान कानपूर, इलहाबाद, मंथरा, बांगला देश, आगरा, इटावा आदि स्थानों के गुरूद्वारें और संगत कायम की थी ।

गुरूजी का मिशन था :-

मैं काहू को देत नहि, न भै मानत आन ।।

श्री अैच पेन के कथनानुसार छटै सातवे और आठवे गुरू विरुद्ध मुगल विरोधता लगातार जारी रही । १६५८ में औरंगजेब सिंहासनपर बैठा तो गुरूजी को तंग करना शुरू किया । आखिर गुरूजी को बिना वजह गिरफ्तार

किया ।

गुलाम हुसैन भी इस बात पर सहमत है कि :

गुरूजी का संबंध एक सूफी फकीर हफीज आदम के साथ था, औरंगजेब सूफियों के विरुद्ध था । उनके खिलाफ ये भी दोष था कि वो जनता को भडका रहे हैं और कर वसूल कर रहे हैं । खबर रसानी के महकमें ने औरंगजेब को लिखा था कि हफीज आदमशेख अहमद के स्कूल से संबंध रखता है ।

इन उपरोक्त कारणो के सिवाय गुरू घर के विरोधी बदले की झांक में बैठे थे । गुरू हरिराई साहिब के समय धीरमल ने डट कर मुकाबला किया । रामराई ने औरंगजेब के समय बालक आठवे गुरू गुरू हरि किशनजी को गद्दी पर से उतारने की कोशिश की थी ।

औरंगजेब की धार्मिक नीति भी इस शहादत का कारण थी । उसने अपने पिता को कैद करके भाईयों को कत्तल करके सिंहासन पर बैठा था । औरंगजेब ने सिंहासन पर बैठते ही सूफी फकीरों संतों सियाओं को खत्म करने की सोची थी । मौलवियों, काजिओं, मुफतिओं को अपने पक्ष में करने के लिये रिशवते दी । हिंदुओं और सूफियों को खत्म करना शुरू कर दिया ।

लतीफ लिखता है कि :-

हिंदुओं की पाठशालायें बंद करवाकर मदरसे खुलवाये । बनारस का विश्वनाथ मंदिर राजा नरसिंह ने ३३ लाख में बनवाया था । उसकी सभी कीमती मूर्तीयां को आगरे में ले आया । मथुरा का नाम इस्लामाबाद रख दिया । सारे हिंदुस्तान में एक धर्म इस्लाम करने के लिये गवर्नर और नवाबों को अधिकार दे दिये और एक स्पेशल महकमा खोला गया ।

बैनरजी लिखते हैं कि :-

औरंगजेब सुंन्नी राज्य खत्म करके पक्ष में था । इसकी स्थापना के लिये औरंगजेब ने हर जायज और नाजायज तरीके अपनाये, पूरे हिंदुस्तान में बगावतें हुई । उसने दबा दी । कई गरीब लालच में और कई डर के मारे मुसलमान हो गये । और कईयों को बंदी खाने में बंद कर दिया गया ।

मैकालफ लिखता है कि :-

औरंगजेब ने सब से पहिले काश्मिर को चुना । उसके इसे चुनने के

चार मुख्य कारण थे । वो नीचे दिये हैं :-

१) काश्मिर के पंडित विद्वान थे । उनके इस्लाम कबूल करनेपर बाकी सभी जल्दी ही इस्लाम कबूल कर लेंगे ।

२) काश्मिरी अगर बगावत करेंगे तो पैशावर से और काबूल से जलदी दबाया जा सकता है ।

३) काश्मिरी पंडित लालची थे, उन्हे लालच देकर भी मुसलमान बनाया जा सकता है ।

४) काश्मिर की राजनीतिक महत्ता बहुत थी । इस इलाके के मुसलमान बनने से सभी पर उचित प्रभाव पडेगा ।

इसके अलावा भाई मनी सिंघ की भगतमाला में लिखा की औरंगजेब ने सोचा की पंडित विद्या पढाते हैं । उन्हें मुसलमान बना ले तो जनता को कौन पढायेगा? तब उनका कोई धर्म न होने से जलदी ही मुसलमान बन जायेंगे ।

इस बारे में गिआनी गिआन सिंघ जी लिखते हैं कि :-

औरंगजेबने शेर अफगान खां को पूरा अधिकार देकर काश्मिर भेजा कि तलवार के जोर से मुसलमान बनाये जाये ।

उपरोक्त सभी विचारों को सन्मुख रखकर काश्मिरी पंडित गुरू तेग बहाद्दर के पास आये और विनंती की तब गुरूजी ने हिंदु धर्म की रक्षा खातर अपना आप निछावर कर दिया और हिंद की चादर, हिंदू की पत रखनेवाले के नाम से सन्मानित किये गये कुछ विद्वानों का ख्याल है अगर गुरूजी कुरबानी न देते तो आज पूरा हिंदुस्तान मुसलमान होता । एवं सभी मंदिरों के स्थान पर मसजिदे होती और स्कूलों की जगह मदरसे होते भाव हिंदु जाती का नामोनिशान न होता । इसिलिये हमारे सभी देशवासी का फर्ज बनता है कि उनकी सालाना बर्सी पर अपने सच्चे दिलों से सत्कार सहित मनाये और उनके जीवन को अपने सामने रखकर अपने जीवन में एक नई रोशनी पैदा करे ।

अनुवाद **तारासिंघ गोरोवाडा**

गुरुमति प्रकाश के सौजन्य से

बंद-बंद कटवाने वाले : शहीद भाई मनीसिंघजी

- श्रीमती शैल वर्मा

भाई मनीसिंघजी बचपन में आप अपने, माता-पिता के साथ श्री अनंदपुर साहिब के दर्शन करने गये । कुछ दिन वहां रहने के बाद वापस होने लगे तो श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने इन्हें अपने पास रख लिया । इस समय आपकी आयु पांच वर्ष की थी। आप श्री गुरू गोबिंद राय जी के साथ खेला करते थे । गुरु-परिवार के साथ रहने का सौभाग्य भाई मनिया को प्राप्त हो गया । जब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी गुरगद्दी पर बैठे तो भाई मनिया को लंगर के प्रबंध और देखभाल के लिये लगा दिया गया । ये लंगर का कार्य सुचारू रूप से करते थे । इसके साथ ही इनका मन लेखन-कार्य में अधिक व्यस्त रहता था । दशमेश पिता द्वारा साजे पांच प्यारों से तत्कालीन उच्च कोटि के कवियों में भाई मनीसिंघ का नाम सम्मान के साथ लिया जाता है । अमृत-पान कर वे 'भाई मनीसिंघ' कहलाए ।

भाई मनीसिंघ जी का रुझान पढने-लिखने में अधिक देखकर उन्हें लंगर के कार्य से अलग कर दिया गया और वे मुख्यत: गुरबाणी सिखाने का कार्य करने लगे । आप युद्ध-कला में भी निपुण रहे । १७०४ ई वी. में मुगलों के साथ युद्ध हुआ । अनंदपुर साहिब का किला खाली करना पडा । उन्हें गुरु जी के महिलों (परिवार) को सुरक्षित, मुगलों के चंगुल से बचाते हुये दिल्ली पहुंचाना पडा । जब मुगलों से युद्ध समाप्त हुआ तो भाई मनीसिंघ जी ने गुरु जी के महिलों को लेकर तलवंडी साबो (बठिंडा) पहुंचे । कुछ दिन बाद माता सुंदरीजी (गुरू गोबिंद सिंघजी का परिवार) ने भाई मनीसिंघ जी को श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर का ग्रंथी नियुक्त करके भेजा । भाई मनीसिंघ जी ने श्री हरिमंदर साहिब का प्रबंध बहुत सुचारू रूप से चलाया ।

भाई मनीसिंघ जी ने श्री अमृतसर में रह कर कई रचनायें जैसे 'भगत रतनावली', 'गिआन रतनावली' आदि कीं, जो इस समय एक अमूल्य निधि

और महत्त्वपूर्ण हैं । इसके अतिरिक्त आपने दसम ग्रंथ का संपादन भी आरंभ किया ।

मुगलों के आंतक के कारण कुछ वर्षों से श्री अमृतसर में दीपावली का मेला नहीं लग पा रहा था । उन्होंने श्री अमृतसर में दीपावली के मेले का आयोजन करना चाहा । इसके लिये उन्होंने लाहौर के गवर्नर जकरिया खान को लिखा । ५०००/- रुपये का कर लेने की बात कह कर जकरिया खान ने मेले की स्वीकृति दे दी । भाई मनीसिंघ जी ने सिक्खों को श्री अमृतसर मेले में आने के लिये पत्र लिख भेज दिये । उधर जकरिया खान ने श्री अमृतसर की ओर अपनी सेना भेज दी । भाई मनीसिंघ जी ने मुगलों की नीयत की खोट समझ ली तो लोगों को यहाँ आने से मना कर दिया । परिणाम यह हुआ कि मेला नहीं लग पाया । भेटा कम जमा हुयी । मुगलों ने तय किया हुआ कर मांगा । भाई मनीसिंघ ने इंकार देने से कर दिया "जब मेला लगा ही नहीं तो कर कैसा?" मुगलों ने भाई मनीसिंघ जी को गिरफ्तार करके उनका बंद-बंद काट देने का आदेश दिया । भाई मनीसिंघ जी ने गुरबाणी पढते-पढते अपना बंद-बंद (अंग अंग) कटवा कर शहीदी प्राप्त की ।

इतनी महान कुर्बानी देने का साहस भाई मनीसिंघ जैसे शूरवीर ही कर सकते हैं । एक विद्वान, बहादुर, साहसी और नेक चाल-चलन के सिद्धांत पर चलने वाला व्यक्ति ने, इतनी दर्दनाक स्थिती को झेला यह सोच कर आज भी हम सबका खून खौल उठता है ।

श्री गुरु गोबिंदसिंघ जी ने आदि बीड (श्री गुरू ग्रंथ साहिब) में नवम पातशाह की बाणी शामिल करके श्री गुरु ग्रंथ साहिब की सम्पूर्ण बाणी वाली बीड भाई मनीसिंघ से लिखवाई जो सिक्ख धर्म में 'दमदमे वाली बीड' के नाम से जानी जाती है ।

- गुरुमति ज्ञान के सौजन्य से

शहीद भाई मतीदास जी, भाई दिआला जी और भाई सतीदास जी

- डॉ. निर्मल कौशिक (पंजाब)

प्रमाणिकता के आधार पर श्री गुरु तेगबहादर जी के समक्ष शहीद होने वाले उनके शिष्यों अथवा सिक्खों के नाम भाई मतीदास जी, भाई दिआला जी और भाई सतीदास जी हैं । उस समय की रचना 'भट्ट बही मुलतानी सिंधी' में इन शहीदों का वर्णन इस प्रकार दर्ज किया गया है-- "दिआल दास बेटा माई दास का, पोता बालू का, पडपोता मूले का, गुरु गैल मग्घर सुदी पंचमी संवत् १७३२ (१६७५ ई.वी.) है । दिल्ली चांदनी चौक में शाही हुकुमसे गैल मारा गया । गैले मतीदास, सतीदास बेटे हीरानंद के, पोते लखीदास के, पडपोते पराग के, बंस गौतम का, सरसवती (सारस्वत) भार्गव गोत्र ब्राह्मण छिब्बर मारे गए ।"

प्रसिद्ध इतिहासकार कनिंघम और डॉ. फौजासिंघ के अनुसार शहादत हा गौरव अर्जित करने वाले तथा धर्म और संस्कृति की रक्षा करने वाले गुरु-घर के अनन्य सेवक सबसे पहले भाई मतीदास जी को, फिर भाई दिआला जी को और फिर भाई सतीदास जी को गुरु जी के समक्ष शहीद किया गया । इन तीनों सिक्खों के पूर्वज श्री गुरु अरजन देव जी के समय से ही गुरुघर से जुडे हुए थे । संतोष, संयम और सेवक के गुणों से सुशोभित गुरु-घर की आत्मभाव से सेवा करते आ रहे थे । उनकी कुल और वंश की सेवा-भावना से प्रसन्न होकर ही भाई मतीदास जी को गुरु-घर के दीवान, भाई दिआला जी को तथा भाई सतीदास जी को दरबारी लेखक के रूप में सम्मान प्राप्त था । गुरु-घर के सेवक हीरानंद के पुत्र भाई मतीदास जी और भाई सतीदास जी छिब्बर वंश के थे जो जिला जेहलम के नगर कडियाला के निवासी थे । आपके पूर्वज भाई गौतम गुरु-घर के अनन्य सेवक थे । उनका बेटा भाई परागदास श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की सेना का नामी शूरवीर हुआ जिसने सं. १६७८ विक्रमी (१६२१ ई. वी.) में युद्ध में वीरगति प्राप्त की । भाई पराग

दास का सुपुत्र लक्खीदास तथा लक्खीदास का सुपुत्र दुरगा मल था, जो श्री गुरु हरिराय साहिब और श्री गुरु हरिकिशन साहिब जी के समय में गुरु-घर के दीवान की सेवा निभाता रहा । भाई दुरगामल ही दिल्ली से श्री गुरु तेगबहादर जी के लिए गुरिआई का तिलक और नारियल लेकर बाबा बकाला आये थे । वृद्धावस्था के कारण उन्होंने गुरु-घर से गुरु-आज्ञा से विदा ले ली । इसके पश्चात् इनके भतीजे तथा भाई हीरानंद के सुपुत्र भाई मतीदास जी और भाई सतीदास जी ने गुरु-घर की सेवा का संकल्प लिया और आजीवन निभाया । भाई मतीदास जी और भाई सतीदास जी ने गुरु-घर की जी-जान से सेवा की और श्री गुरु तेगबहादर जी के पावन चरणों में स्वयं को समर्पित कर दिया । यही कारण है कि उन्होंने गुरु जी से पहले शहीदी प्राप्त की । भाई सतीदास जी और भाई मतीदास जी ने भ्रम और भयमुक्त होकर गुरु जी के साथ ही दिल्ली प्रस्थान किया और अपने संकल्प को पूरी ईमानदारी के साथ निभाया । कहते हैं कि गुरु जी की कृपा से भाई मतीदास जी महाशक्तिशाली थे । उन्होंने एक बार गुरु जी से दिल्ली सल्तनत की ईंट से ईंट बजाने की अनुमति भी मांगी लेकिन गुरु जी ने ऐसा करने से साफ मना कर दिया । गुरु जी ने समझाया कि हमें तो उस ईश्वर की इच्छा में रहना है, उसके भाणे (इच्छा) को मीठा करके स्वीकार करना है । शहीद किये जाने से पूर्व काजी ने भाई मतीदास जी से उनकी अंतिम इच्छा के बारे में पूछा तो उन्होंने अत्यंत नम्रता से कहा कि मेरे सिर पर आरा चलाते समय मेरा मुंह गुरु जी की ओर ही रखा जाए तथा लहू से लथ-पथ मेरा मुंह साफ न किया जाए । उन्होंने गुरु-आदेश के अनुसार जपु जी साहिब का पाठ करते-करते अपना तन चिरवाया लेकिन सिक्खी सिदक को आंच नहीं आने दी । कवि भाई संतोख सिंघ ने 'गुर प्रताप सूरज ग्रंथ' में इस घटना का वर्णन इस प्रकार किया है :

मतीदास को कीनि बुलावनि । दुइ तखते महिं करयो बंधावनि ।
हुकम जलादनि तबहि उचारा । लै आरा सिर पर तिस धारा ।।४५।।
अरधो अरध चिराइ सु डारा । परयो प्रिथी पर है दो फारा ।
दोनहु तन ते जपुजी पढै । हेरति सभि के अचरज बढै ।।४६।।
होइ दुखंड न जीवति कोई । इह तो पठति जियति जिम होई ।

भोग पाइ करि दोनहुं तनते । गुरपुरि पहुंचयो प्रेमी मन ते ।।४७।।
(गुर प्रताप सूरजग्रंथ, रासि १२, अंसू ५४)

भाई मतीदास जी के तीन सुपुत्र थे साहिबचंद, मुकंदराय तथा चरणदास । साहिबचंद दशमेश पिता श्री गुरु गोबिंदसिंघ जी का घरबारी दीवान रहा जो ७ कार्तिक १७५७ वि: को निरमोहगढ के युद्ध में शहीद हुआ । भाई मुकंद राय ने चमकौर की गढी में शहीदी प्राप्त की । भाई चरणदास ने साधु वेश धारण कर भदौड नामक स्थान पर गुरमति का प्रचार किया ।

दिल्ली में श्री गुरु तेगबहादर जी के साथ शहादत पाने वाले गुरु-घर के अनन्य सेवक भाई दयालदास जी को प्यार और सत्कार सहित भाई दिआलाजी के नाम से जाना जाता है । इनके पूर्वज भी कई पीढियों से गुरु-घर की सेवा में तल्लीन थे । गुरु-घर की सेवा करने वाले इस श्रद्धालु परिवार पर गुरु-जनों की अपार कृपा रही । आप भाई मूलचंद के पडपोते, भाई बालू के पौत्र तथा भाई माईदास के सपुत्र थे । आप के दादा भाई बालू सिक्ख इतिहास (सन् १६२८) के प्रथम युद्ध में शहीद हुए । इनके साथ ही भाई मतीदास जी के पडदादा भाई परागदास भी शहीद हुए थे । आपके पिता भाई माईदास अलीपुर (मुलतान) के निवासी थे । सन् १६५७ में आप परिवार गुरु-सेवा में अग्रणी था । भाई माईदास के ग्यारह सपुत्र थे । पहले तीनों बेटों को आप ने गुरु-चरणों में अर्पित कर दिया था । इनमें भाई दिआलाजी दूसरे क्रम पर थे ।

उस समय भाई दिआलाजी की आयु १५ वर्ष की थी । आपकी सेवा से प्रसन्न होकर आपको गुरु जी ने कुछ विशेष कार्य सौंप दिए थे । बाबा बकाला में जब धीरमल के व्यक्तियों द्वारा गुरगद्दी पर अपना अधिकार बताते हुए सीहे मसंद ने गोली चलाई तो भाई मतीदास जी और भाई सतीदास जी के साथ मिल कर भाई दिआलादास भी श्री गुरु तेगबहादर जी की सुरक्षा के लिए डट गए । इनका धैर्य और बल देखकर धीरमल के मसंद भाग खडे हुए । सन् १६६५ में पूर्वी प्रांतों में गुरु जी ने गुरमति प्रचार हेतु भाई मतीदास जी को नियुक्त किया तथा भाई सतीदास जी को द्विभाषिया नियुक्त किया । जब गुरु जी पटना पहुंचे तो घर और गुरु-परिवार की सारी जिम्मेदारी भाई दिआलाजी को सौंप दी ।

जब श्री गुरु तेगबहादर जी को कैद करके सरहिंद और दिल्ली के कैदखाने में रखा गया तो गुरु जी के अन्य सिक्खों सहित भाई दिआलाजी भी गुरु जी के साथ कैदखाने में रहे । भट्ट बही में इसका वर्णन इस प्रकार किया गया है : "गुरु तेगबहादर महल नामा को नूर मुहम्मद खान मिर्जा चौकी रोपड वाले ने साल सत्रह सौ बत्तीस सावन प्रविष्टा बारां मलकपुर परगना धनौली से पकड कर सरहिंद पहुंचाया । साथ सतीदास, मतीदास बेटे हीरामल छिब्बड के साथ दआलादास बेटा माईदास बलाउत भी पकडा गया ।"

भाई मतीदास जी गुरु-घर के दरबारी दीवान थे तो भाई सतीदास जी घरबारी दीवान थे । भाई सतीदास जी फारसी के अच्छे विद्वान थे, लिखने-पढने का काम करते थे । हुकमनामा लिखना, खाता तैयार करना, पत्राचार करना आपके कार्य-क्षेत्र में था । गुरु जी की बाणी का लेखन-कार्य भी आप ही करते थे ।

आप भी अपने भ्राता भाई मतीदास जी के साथ ही गुरु-चरणों में लगभग दस वर्ष तक रहे । भाई मतीदास जी और भाई सतीदास जी के पिता भाई हीरानंद श्री गुरु हरिरायसाहिब के प्रिय सिक्ख और वीर योद्धा थे, जिन्हें गुरु जी ने अपना आशीर्वाद देकर कुछ विशेष कार्य सौंपे थे ।

भाई हीरानंद के भ्राता भाई दुरगा मल सातवें और आठवें गरु जी के काल में गुरु-घर के मुख्य दीवान थे । जब नवम गुरु श्री गुरु तेगबहादर जी ने इन्हें सिरोपा भेंट कर सम्मानित किया तो भाई दुरगामल ने गुरु जी के चरणों में निवेदन किया कि मेरे इन भतीजों भाई मतीदास जी और भाई सतीदास जी को भी अपने पावन चरणों में सेवा का अवसर प्रदान करें । गुरु जी ने दोनों भाई मतीदास जी और भाई सतीदास जी को आपने गले से लगा लिया और गुरु-घर की सेवा का कार्यभार संभाल कर निश्चिंत हो गए । समय के साथ-साथ दोनों सिक्ख गुरु-घर और गुरु-दरबार में अपनी सेवा से गुरु जी के चहेते सिक्ख बन गए । उन्होंने अंत तक गुरु जी का साथ ही नहीं निभाया अपितु गुरु जी से पहले शहीदी भी प्राप्त की ।

जब भाई मतीदास जी को कोतवाली से निकाल कर चांदनी चौक लाया गया तो काजी ने धड चीरने अथवा धर्म-परिवर्तन में से अंतिम बार

अपनी इच्छा बताने के लिए कहा तो भाई मतीदास जी ने उत्तर दिया :

टुकडे ऐस सरीर दे, करो जो लख करोड ।
तां वी धरम न छोडसां, दीन तेरा नहीं लोड ।।
आरा पिआरा लगत है, कारा करो बनाय ।
सीस जाए ता जाणे दे, सिखी सिदक न जाए ।।

आखिर धर्म की खातिर भाई मतिदास जी शहीद हो गए । उन्हें सरे बाजार लकडी के दो तख्तों में कस कर दोफाड कर आरे से शहीद कर दिया गया । भाई साहिब निरंतर बाणी उच्चारते रहे और गुरु-चरणों का ध्यान करते-करते गुरु-चरणों में ही विलीन हो गए । भाई मतीदास जी ने एक बार भी कोई घबराहट या कष्ट का आभास नहीं होने दिया । उनके सिक्खी सिदक की झलक उनके तेजमयी चेहरे से साफ नजर आ रही थी । दुनिया ने ऐसा बलिदान न देखा न सुना था । इस बलिदान को देखकर भाई दिआलाजी ने कहा था, "आपने आज केवल एक बेगुनाह सिक्ख को ही नहीं चीरा है बल्कि बाबर की तैश और बादशाही चिरवा दी है ।" किसी ने सच ही कहा है, "विनाशकाले विपरीत बुद्धि ।" यह सुनते ही काजी और अन्य कर्मचारी क्रोधित हो उठे । उन्होंने भाई दिआला जी के हाथ-पांव अच्छी तरह बांध कर उन्हें खौलते पानी की देग में बिठा दिया और वे शहीद हो गए । सतिगुरु के प्रिय संगी और अनन्य सेवकों के मुख से एक बार भी 'सी' तक नहीं निकली । अंत में भाई सतीदास जी के शरीर पर रुई लपेट कर उन्हें जिंदा जला कर शहीद कर दिया गया ।

इस प्रकार गुरु-घर के तीनों सेवक अपने धर्म, कौम, संस्कृति की सुरक्षा के लिए अडिग रह कर आत्म-बलिदान की बलिवेदी पर न्यौछावर हो गए । यह घटना १० नवंबर, १६७५ ई की है ।

श्री गुरु तेगबहादर साहिब के समक्ष उनके अत्यंत प्रिय सिक्खों को शहीद कर दिया गया । शासकों का विचार था कि गुरु जी के सिक्खों का इतनी निर्दयता से अंत किया जाए कि श्री गुरु तेगबहादर जी का मन विचलित हो जाए और वे मृत्यु से भयभीत होकर अपना निर्णय बदल कर धर्म-परिवर्तन कर लें, लेकिन यह उनका मात्र भ्रम था । श्री गुरु तेगबहादर जी ने अपने आत्मविश्वास, दृढ संकल्प और इच्छा-शक्ति से शहीद होना

स्वीकार किया ।

११ नवंबर, १६७५ ई को सच्चे पातशाह साहिब श्री गुरु तेग बहादर जी को चांदनी चौक में शहीद कर दिया गया । उनके इस बलिदान की गाथा को 'बचित्र नाटक' में इस प्रकार चित्रित किया गया है :

ठीकरि फोरि दिलीसि सिरि, प्रभ पुर कीया पयान ।।
तेगबहादर सी क्रिआ करी न किनहूं आन ।।१५।।५।।

श्री गुरु तेगबहादर जी तथा उनके सिक्खों की कुर्बानी को सृष्टि के रहते कोई भी भुला नहीं सकेगा । यही कारण है कि शहीदी के पश्चात आज भी उनकी पावन स्मृति को अरदास (प्रार्थना) में सम्मिलित कर हम उन्हें श्रद्धा-सुमन अर्पित करते हैं ।

- गुरुमति ज्ञान के सौजन्य से

खालसाजी नाम की तरफ ध्यान दो

खालसाजी अपना नाम पूरा लिखा करो और अपने नाम के पीछे (Singh) सिंघ लिखा करो । सिंग नही । क्योंकि सिंघ का मतलब शेर होता है और सिंग का मतलब गाय भैसों के सिंग होता है । अभी आप ही सोचो की आप को क्या बनना है । सिंघ या सिंग ।

बाबा दीपसिंघ जी शहीद

- श्रीमती शैल वर्मा (गुरदासपुर)

बाबा दीपसिंघ जी का जन्म माघ १४, संवत. १७३९ में हुआ । आप जी के पिता का नाम भगताजी और माता का नाम माता जीऊणीजी था । बडे होने पर बाबा दीपसिंघ जी अनंदपुर साहिब चले गये और दशमेश पिता श्री गुरु गोबिंदसिंघ जी की सेवा में रहने लगे । बाबा दीपसिंघ जी को श्री गुरु गोबिंदसिंघ जी के हाथों "अमृत-पान" करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ । बाबा जी की मनोवृत्ति पूरी तरह आध्यात्मिक थी । श्री गुरु गोबिंदसिंघ जी ने इन्हें गुरबाणी अध्ययन की शिक्षा दी । वे नाम-सुमिरन और गुरबाणी-पठन में लगे रहते थे ।

श्री गुरु गोबिंदसिंघ जी ने बाबा दीपसिंघ जी को शस्त्र-संचालन में सुप्रवीण किया । बाबा जी वीर योद्धा तथा युद्ध-कला में निपुण थे । बाबा दीपसिंघ जी सुडौल, सुंदर और स्वस्थ एवं गुणवान व्यक्ति थे । उन्होंने श्री गुरु गोबिंदसिंघ जी द्वारा लडे गये युद्धों में अपना युद्ध-कौशल अच्छी तरह निभाया । श्री गुरु गोबिंदसिंघ जी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का भावार्थ (सटीक) किया तो बाबा दीप सिंघ जी ने सबसे पहले यह भावार्थ सुना । वे एक परम विद्वान व्यक्ति थे । गुरु जी के आदेश से आप ने तलवंडीसाबो में रह कर सिक्खी का प्रचार-प्रसार किया और श्री गुरु ग्रंथसाहिब जी की पावन बीड तैयार की । तलवंडीसाबो में रहते हुये भाई मनीसिंघ जी के साथ मिल कर तैयार की गई पावनबीड के अलावा चार और पावनबीडें हाथ से लिख कर तैयार कीं जो बाद में चारों तख्तों पर भेजी गयीं । इनमें से एक बीड श्री हरिमंदरसाहिब में रखी है । सन् १७४८ में बाबा दीपसिंघ जी को 'शहीद मिसल' का जत्थेदार नियुक्त किया गया ।

सन् १७५७ ई.वी. में अहमदशाह अब्दाली ने अमृतसर नगर पर धावा बोल दिया । श्री हरिमंदरसाहिब की इमारत को गिरा कर मलबे से पवित्र सरोवर को भर दिया । बाबा दीपसिंघ जी को सूचना मिली तो हाथ में खंडा लेकर गुन्हेगारों को उनकी अपवित्र कारवाई के लिए दंडित करने को

चल पडे । दमदमा साहिब तलवंडीसाबो से चलते वक्त थोडे-से सिक्ख साथ थे किन्तु तरनतारन तक पहुंचते-पहुंचते सिक्खों की गिनती पांच हजार तक पहुंच गयी । तरनतारन से आते हुए गांव गोहलवड में बाबा जी ने खंडे (भाले) से एक लकीर खींची और पवित्र श्री हरिमंदरसाहिब के हुये अपमान का बदला लेने के लिये जुझारू शूरवीर सिंघों को लकीर से आगे आने के लिए ललकारा । यहां आजकल गुरुद्वारा लकीर साहिब स्थित है ।

सिपहसालार जहानखां अफगान सेना लेकर गोहलवड पहुंचा और यहां जम कर युद्ध हुआ । अफगानों के सरदार व सिपाही पीठ दिखा कर भागने लगे । अचानक हुएवार में बाबाजी का सिर धड से अलग हो गया । बाबा जी दायें हाथ में खंडा और बायें हाथ से अपना शीश संभाले युद्ध करते हुए गुरु की नगरी की ओर चल दिये । बाबा जी ने शूरवीरता की चर्म सीमा को स्पर्श किया जिससे एक विस्मादी इतिहास रचा गया । इस युद्ध में चार और जत्थेदार भाई रामसिंघ, भाई बहादरसिंघ, भाई हीरासिंघ और भाई निहालसिंघ भी शहीद हो गये । कुछ और नामी सिक्ख भी शहीद हुये । गुरुद्वारा रामसर साहिब के पूरब में बाबा जी का अंतिम संस्कार हुआ । आजकल यहां गुरुद्वारा शहीदगंज साहिब बाबा दीपसिंघ जी सुशोभित हैं । श्री हरिमंदर साहिब परिक्रमा में जहां उन्होंने अपना शीश अर्पण किया वहां भी बाबा जी की पावन स्मृति में गुरुद्वारा साहिब बना है । उनका ऐतिहासिक खंडा श्री अकाल तख्त साहिब में रखा है जिसके संगतों को दर्शन कराये जाते हैं ।

हमारे देश को गर्व है ऐसे जांबाजों पर जिन्होंने शस्त्र और शास्त्रों पर समान अधिकार बनाये रख कर अपने ज्ञान और बहादुरी की मिसाल का प्रमाण एक साथ दिया ।

- गुरुमति ज्ञान के सौजन्य से

शहीद भाई सुबेगसिंघ
भाई शाहबाजसिंघ

- सिमरजीत सिंघ

भाई सुबेगसिंघ का जन्म पश्चिमी पंजाब के लाहौर जिले की चूहणीआं तहसील के जंबर गांव के निवासी रायभागा (संधू) के घर हुआ । आजकल जंबर गांव पाकिस्तान के पंजाब राज्य के जिला कसूर का गांव है, जो लाहौर-मुलतान सडक पर फेरू से आगे छांगा मोड पर आबाद है । इस गांव को पंचम पातशाह श्री गुरु अरजनदेव जी के पावन चरणों का स्पर्श प्राप्त है । इस गांव में गुरु साहिब बहिडवाल से चलकर पहुंचे थे । यहां गुरु साहिब ने भाईकिदारा, भाईसमद्धू, भाईमखंडा, भाईतुलसा, भाईलालू आदि सिक्खों को चरण-पाहुल देकर गुरसिक्खि बख्शी थी । इस गांव में गुरु जी की आमद की याद में गुरुद्वारा थंम साहिब सुशोभित है । भाई सुबेगसिंघ का घराना सरकारी ठेकेदारी का काम करता था । ये अरबी-फारसी भाषा के उच्च विद्वानों में गिने जाते थे । सरकार में इनका अच्छा मान-सम्मान था । भाई सुबेगसिंघ को उनके पिता जी ने अच्छी तालीम हासिल करवाई । उन्होंने भी अपने पूर्वजों की तरह सरकार से ठेके लेकर अपना काम बडी ही मेहनत तथा ईमानदारी से करना शुरू किया । भाई सुबेगसिंघ भजन-बंदगी करने वाले तथा अच्छे आचरण वाले व्यक्ति थे । इनका सिक्खों के मन में बहुत सत्कार था । 'श्री गुर पंथप्रकाश' में जिक्र है :

तुरक उसे खालसो वल तोरैं, खालसा भी तिस को भल लोरैं ।
कोई तुरकन परै जरूरी काम, तौ उस भेजैं कर कर सलाम ।

भाई सुबेगसिंघ के घर भाई शाहबाजसिंघ ने जन्म लिया । जब भाई शाहबाज सिंघ की आयु पढने योग्य हो गई तो उन्हें पढने के लिए लाहौर की एक मसजिद में भेजा गया । भाई शाहबाजसिंघ बहुत ही सूझवान थे । उन्होंने सिक्ख धर्म एवं सिक्ख इतिहास के बारे में जानकारी अपने माता-पिता से प्राप्त की हुई थी ।

बाबा बंदासिंघ बहादर की शहीदी के बाद सिक्ख बहुत कठिनाइयों में समय काट रहे थे । सिक्खों पर हकूमत का कहर टूट पडा था । हजारों ही निर्दोष सिक्खों को असहनीय यातनायें देकर शहीद किया जा रहा था । सिक्खों के सिरों के दाम लगाकर उनका नामो-निशान मिटाने के लिए ढिंढोरा पीटा जा रहा था । जब सिक्खों पर यह भयानक समय चल रहा था तो उस समय कुछ इसलामिक वर्ग भी राजनीतिक नीतियों से तंग-परेशान थे । फलस्वरूप कई रियासतों के सैयदों ने बगावत कर दी । बादशाह फरुख्सियर इस बगावत को दबाने में व्यस्त हो गया । यह सिक्खों के लिए सुनहरी मौका था । वे जंगलों-पहाडों से निकलकर मैदान में आकर अपने गुरु-घरों की सेवा-संभाल करने लग गए । सिक्खों ने १७८१ बिक्रमी (१७२४ ई.वी.) की वैसाखी श्री अमृतसर में खुलकर मनाई, जिसमें भारी इकट्ठ हुआ । इस समय के दौरान सिंघों की भाई तारासिंघ वां की जत्थेदारी तले शाही फौज के साथ झडप हुई, जिसमें भाई तारासिंघ शहीदी प्राप्त कर गए । इसके बाद सिंघों ने शाही फौज पर यकायक हमले करने शुरू कर दिए । यकायक हमलों से तंग आकर १७३३ ई में जकरीयाखांन ने सिक्खों के प्रति सख्ती करने के बारे में तथा अपनी मुश्किलों सम्बंधी लाहौर से दिल्ली के बादशाह को लिख भेजा । उसने भाई सुबेगसिंघ की सलाह से सुझाव लिखा कि सिक्खों को जागीर दे दी जाये तथा उनके किसी आदमी को नवाब चुनकर साथ मिला लिया जाये । बादशाह ने जकरीया खान की सलाह मान ली ।

जकरीया खान ने सिक्खों के साथ संधि करने के लिए एक लाख रुपए की जागीर, नवाबी का खिताब, खिलअत, नजराने आदि देने का फैसला किया । इस काम के लिए भाई सुबेगसिंघ को अपना अधिवक्ता बनाकर श्री अमृतसर खालसे की कचहरी में भेजा । श्री अकाल तख्तसाहिब के संरक्षण में इकट्ठे हुए खालसापंथ ने पहले तो यह सब कुछ स्वीकार करने से इन्कार कर दिया, जैसे कि 'श्री गुर पंथप्रकाश' में जिक्र है :

हम को सतिगुर बचन पातिशाही,
हम को जापत ढिग सोऊ आही ।।३६।।
हम राखत पातिशाही दावा,

जां इतको जां अगलो पावा ।
जो सतिगुर सिक्खन कही बात,
होगु साई नहिं खाली जात ।।३७।।

किंतु भाई सुबेगसिंघ के बार-बार कहने तथा समझाने पर सिक्खों ने नवाबी लेनी कबूल कर ली । अधिकांश सिक्ख अपने नाम पर नवाबी लेने के लिए तैयार नहीं थे । अंत में सब सिक्खों ने प्रस्ताव पारित करके स. कपूरसिंघ फैजलपुरिये को नवाब की पदवी लेने के लिए कहा । स. कपूरसिंघ ने खालसे की आज्ञा से पांचसिंघों के चरणों को नवाबी की खिलअत स्पर्श कराकर नवाबी कबूल कर ली । इसके साथ ही खालसे को दीपालपुर, कंगणवाल, झबाल परगनों की जागीर दी गई । इसकी एक लाख रुपये वार्षिक आमदन थी । 'श्री गुर पंथप्रकाश' के अनुसार :

सिंघ कपूर झलै पक्खो थोई । क्रिपा नजर पंथ उस वल होई ।
पंच भुजंगीअन चरनी छुहाइ । धरो सीस मोहि पवित्र कराइ ।।४७।।

भाई सुबेगसिंघ के यत्नो का सदका कुछ समय के लिए पंजाब के माहौल में शांति आ गई । भाई सुबेगसिंघ को सूबेदार जकरीया खान ने लाहौर के कोतवाल के पद पर नियुक्त कर दिया । भाई सुबेगसिंघ ने कोतवाल बनने पर लोगों को यातनाएं देकर मृत्यु के घाट उतारने की सजा बंद कर दी । मौत की सजा खास हालातों में केवल फांसी, कत्ल या तोप के आगे बांधकर उडा देने की ही जारी रखी । शहीद सिंघों के सिर, जो किले की दीवारों पर मीनारों की तरह चिने हुए थे या कुएं में फेंके हुए थे, सबको निकलवाकर उनका अंतिम संसकार करवा दिया । शहर में सरेआम गाय काटने पर पाबंदी लगा दी तथा अन्य बहुत-सी बुरी रीतियां बंद करवा दीं । उन्होंने वर्ष भर अपना काम बहुत मेहनत, ईमानदारी तथा न्यायपूर्ण ढंग से किया । इनके काम करने के ढंग से लाहौर के निवासी बहुत खुश थे । जब लाहौर में सिक्खों को कत्ल कर दिया जाता था तो इनका मन बहुत दुखी होता था । ये लोग सिक्खों की मृतक देहों को इकट्ठा करके उनका अंतिम संसकार कर देते थे तथा उनकी यादगारों की निशानदेही कर देते थे । भाई सुबेगसिंघ ने लाहौर में ऐसी निशानदेहियों पर सिक्खों की कई यादगारें भी तामीर करवाईं ।

१७४५ ई में जकरीया खान की मृत्यु के बाद लाहौर का सूबेदार यहीआ खान को नियुक्त किया गया । यहीआखान ने भी सिक्खों पर अत्याचार करने शुरू कर दिए । वो शुरू से ही भाई सुबेगसिंघ से नफरत करता था । उसने भाई सुबेगसिंघ के विरुद्ध शिकायतें सुननी शुरू कर दीं ।

जिस मसजिद में भाई शाहबाजसिंघ विद्या हासिल करने के लिए जाते थे वहां एक दिन बहस के दौरान आप ने सिक्खधर्म के बारे में अपने विचार पेश करके सभी को अपनी योग्यता का लोहा मानने के लिए मजबूर कर दिया । इस ज्ञान-चर्चा में बहुत सारे विद्वानों को मुंह की खानी पडी । इसकी खबर मौलवी तक भी पहुंची । मौलवी ने उन पर मुसलमान बनने के लिए जोर डाला । कई तरह के लालच दिए गए, परंतु वे टस से मस न हुए । स. रतनसिंघ (भंगू) 'श्री गुर पंथप्रकाश' में लिखते हैं;

जैसे तुमै दीन है पयारा । तैसे ही है धरम हमारा ।
कहयो न्वाब तुम आवो दीन, लेवो दाम औ काम औ जमीन ।।७।।
नहीं तो मरनों कर मनजूर, चढो चरख गिर होवो चूर ।

मौलवी ने सूबेदार यहीआखान के आगे शिकायत कर दी । यहीआखान ने तफतीश करने के लिए भाई सुबेगसिंघ तथा उनका पुत्र भाई शाहबाजसिंघ को कचहरी में पेश होने का हुक्म दिया । सूबेदार ने भी उनको इसलामधर्म धारण करने के लिए मनाने के बहुत-से प्रयत्न किए, किंतु भाई शाहबाजसिंघ न माने । 'श्री गुर पंथप्रकाश' के अनुसार :

सुबेग सिंघ फड जंबरों मंगाया । तिसका बेटा साथ फडाया ।

सिक्खों की मदद करने के दोश में भाई सुबेगसिंघ को भी कैद कर लिया गया तथा इसलामधर्म धारण करने के लिए जोर डाला गया ।

अंत में इन दोनों पिता-पुत्र को पकडकर जेल में बंद कर दिया गया । इनको इसलामधर्म कबूल करवाने के लिए हर कोशिश की गई, किंतु ये दोनों योद्धा अपने धर्म पर डटे रहे और हर तरह के कष्ट झेलने के लिए तैयार हो गए । भाई सुबेगसिंघ तथा भाई शाहबाज सिंघ ने हाकिमों को कहा कि "जिस तरह तुम्हें अपना धर्म प्रिय है, उसी तरह हमें भी अपना धर्म प्यारा है । मृत्यु का हमें कोई डर नहीं, मृत्यु ने तो आना ही आना है । यदि धर्म परिवर्तन करने से भी मृत्यु टल नहीं जाती, तो फिर अपने जमीर को मारकर

जीना किस काम का?'' ज्ञानी गिआनसिंघ 'पंथप्रकाश' में लिखते हैं :

तुरक भए जे मरै न कबही तौ हम तुरक बनैहैं,
मौत रहे जे तहि भी सिर पर तो क्यों धरम तजैहैं ।

'तवारीख गुरू खालसा' के कर्ता ज्ञानी गिआनसिंघ लिखते हैं कि भाई सुबेगसिंघ तथा भाई शाहबाजसिंघ को चरखडियों पर चढाने से पहले घोर यातनायें दी गईं । उनको नंगा करके उल्टा लटकाया गया; कोडे मारे गए तथा अन्य कई प्रकार के कष्ट दिये गये ।

यहीआखान ने इनको चरखडी पर चढाकर शहीद करने का फरमान काजी द्वारा जारी करवा दिया । पहले भाई सुबेगसिंघ को चरखडी पर चढाया गया । भाई सुबेगसिंघ पर कोई सख्ती चलती न देखकर उनको चरखडी से उतारकर उनके नौजवान सपुत्र भाई शाहबाजसिंघ को चरखडी पर चढाकर यातनाएं देने का हुक्म दिया । भाई रतनसिंघ (भंगू) के अनुसार :

तब नवाब ऐसे कहयो, या को लेहु उतार ।
याके बेटे को टंगयो, याहू को जु दिखार ।।६।।

जल्लादों ने भाई सुबेगसिंघ की आंखों के सामने भाई शाहबाजसिंघ को चरखडी पर चढाकर घुमाया । इन दोनों गुरसिक्खों ने अकाल पुरख के हुक्म अंदर सिमरन करते हुए सारी यातनाएं झेलीं । 'श्री गुर पंथ प्रकाश' में जिक्र है :

उचे चाढ फिर बहुत घुमाया, वाहिगुरू तिन नांहि भुलाया ।
जयों जयों मुख ते गुरू उचारे, अकाल अकाल कर ऊच पुकारे ।।४।।

चरखडी की दो बार की मार से उनका सारा शरीर जख्मी हो गया था । उनका मास जंबूरों से तोडा गया । ऐसी दर्दनाक यातनायों को देखकर हर एक ने मुंह में उंगली डाली हुई थी । जल्लाद यातनाएं दे-देकर थक चुके थे । आखिर, उन्होंने भाई शाहबाजसिंघ को बंदीखाने में भेज दिया ।

एक नई चाल द्वारा दोनों पिता-पुत्र को एक दूसरे से अलग करके यह अफवाह फैला दी कि दोनों ने इसलाम धर्म कबूल कर लिया है । भाई शाहबाजसिंघ को कहा गया कि ''तू अभी बच्चा है । तेरी उम्र दुनिया देखने की है । तेरे पिता ने तो अपनी उम्र भोग ली है । तू समझदार और फारसी

गुरू अरजन देवजी की बढती हुई शोहरत और मान्यता को मुगल बादशाह जहांगीर सहन न कर सका क्योंकि गुरूजी को हिंदू, मुस्लमान दोनो ही गुरू मानते थे। यहा तक जहांगीर का पुत्र शहजादा भी उनके दर्शन के लिए आया था. जहांगीर यह सहना सक्का। उसने गुरूजी को गिरफ्तार करने का हुक्म देकर उसपर शहजादे को मदत करने इलजाम लगाकर उसको अपनी के तवे पर बिढाकर सरपर गरम रेत डालकर उन्हे तारीख ३०/५/१६०६ को शहीद कर दिया गया।

कहानी पढे पन्ना ७ पर

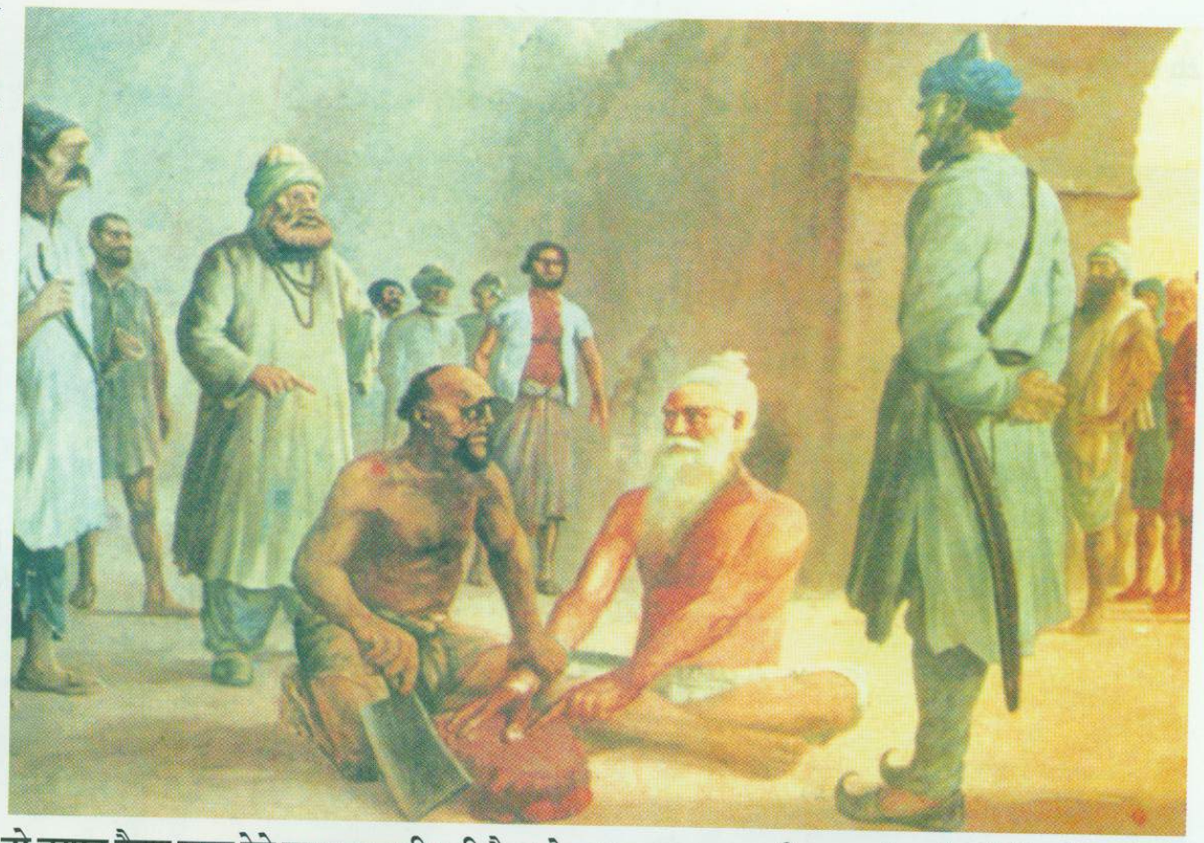

शहीद भाई मनीसिंघजी ने मुगलोसे अमृतसर में बैसाखी का मेला मनाने के लिए लाहोर मे वजीर खान से पांच हजार रूपये देने के वादे पर मंजुरी ली थी। लेकिन मुगलो की नियत खराब हो गई, उनकी आनेवाले श्रध्दालुओं को खत्म करने का मनसूबा बना लिया था। इस लिए भाई मनीसिंघ ने बैसाखी का मेला नही मनाया। और रकम भी नही दी। मेला नही तो लगान कैसा रकम देने का सवाल ही नही पैदा होता। इस बात पर वजीर खान ने भाई मनीसिंघ के शरीर के बंध बंध काट देने की सजा सुनाई और ये शहादत २४/६/१७३४ को घटी।

कहानी पढे पन्ना १८ पर

शहीद बाबा दिपसिंघ जी जब मुगलो ने अमृतसर को जीत कर मंगल सरदार मस्सा रंगड ने वहां के पवित्र हरी मंदिर में शराब के दौर शुरू कर दिए और वेशों का नाच नचाने लगे। जब बाबा दिपसिंघ ने सुना वो उसी समय अपने ५०० सिख सैनिक को लेकर व मुगलो को गुरूद्वारे का अनादर करने की सजा देने के लिए निकल पडा। उसने प्रण किया की में दोषीयों को सजा देकर हरी मंदिर के दर्शन को आऊंगा, अचानक मैदान में ही किसी ने उसका सर धड से अलग कर दिया। तभी किसी ने कहा बाबाजी तुम तो मुगलो को सजा देकर हरी मंदिर के दर्शन को जाने वाले थे, ये सुनते ही बाबाजी ने अपने बाये हथेली पर अपना सर रखा और लडते लडते ३-४ मील का सफर तय करके अपना प्रण पूरा किया और अपने प्राण त्याग दिए।

कहानी पढे पन्ना २६ पर

शहीद भाई मतिदासजी मुगलो ने सोचा गुरू तेग बहादर के शिष्यों को कडी सजा देकर मौत के घाट उतार देने से गुरू तेग बहादर खुदबखुद इस्लाम को कबूल कर लेगें, इसलिए मुगलो ने गुरूजी के समक्ष भाई मतिदासजी को १०/११/१६७५ को दिल्ली में आरे से काटकर शहीद कर दिया। लेकिन वे मतिदास को मुसलमान न बना सके।

शहीद भाई सतिदासजी जब गुरू तेग बहादरजी हिंदु धर्म की रक्षा के लिए दिल्ली गए तभी साथ में भाई सतिदासजी, भाई दयालाजी तथा भाई मतिदासजी भी साथ थे। दिल्ली में गुरू बहादरजी को मौत के डर का दबाव डालने के लिए उनी के सामने भाई सतिदासजी इसलाम धर्म कबूल ना करने पर अपने सिख धर्म को बचाने के लिए उसने मौत को कबूल कर दिया। उन्हे १०/११/१६७५ को जिंदा शरीर पर रूई बांधकर जलाकर शहीद कर दिया गया।

कहानी पढे पन्ना २० पर

शहीद भाई तारूसिंघजी ने अपने सिखी धर्म को बचाते हुए अपनी खोपडी उतरवानी मंजुर की लेकिन केस नही कटाए और नाही इसलाम को कबूल किया। २७/६/१७४५ को शहीद किए गए।

कहानी पढे पन्ना ४३ पर

शहीद भाई सुबेगसिंघ और शहाबाजसिंघजी ये दोनों पिता-पुत्र मुगलों के ठेकेदार थे। फारसी के अच्छे विद्वान थे, सिखों की सहायता करने पर इन्हें इसलाम कबूल करने के लिए कहा गया। लेकिन दोनों पिता-पुत्रों ने सिखी पर प्राण न्योछावर कर दिए और इन्हे मुगलो ने चरखडी पर चडाकर १०/३/१७४६ को शहीद कर दिया।

कहानी पढे पन्ना २८ पर

भाई सुखासिंघ और मेहताबसिंघ ने जब सुना की मस्सा रंगड ने हरी मंदिर में वेशों का नाच शुरू कर दिया तो उसे पवित्र मंदिर में इस बुराई को देखकर सिखों का खुन खोल उठा। भाई सुखासिंघ और मेहताबसिंघ ने प्रण कर लिया की इस अनादर का बदला जरूर लेगें, वे गांव के सरपंच बनकर मस्सा रंगड के पास पहुंचे, मौका मिलते ही मस्सा रंगड का सिर काटकर भाले पर लटकाकर अपने जथेदार के पास ले जाकर सिर को पटक दिया। इस घटना ११/८/१७४० को घटी।

कहानी पढे पन्ना ४८ पर

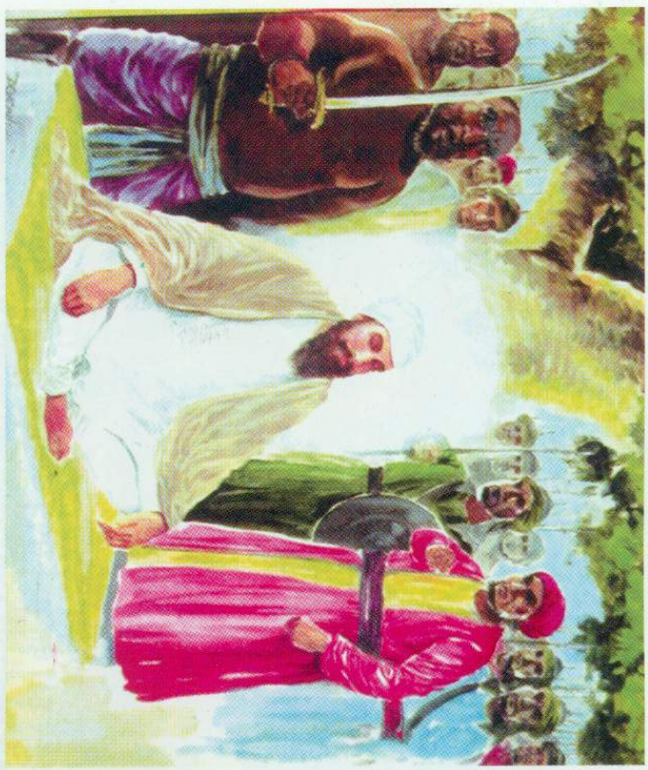

गुरू तेग बहादरजी ने इसलाम धर्म कबूल न किया तो उन्हें दिल्ली के चांदनी चौक में दिनांक ११/११/१६७५ को सिर छेद करके शहीद कर दिया गया।

कहानी पढे पन्ना १४ पर

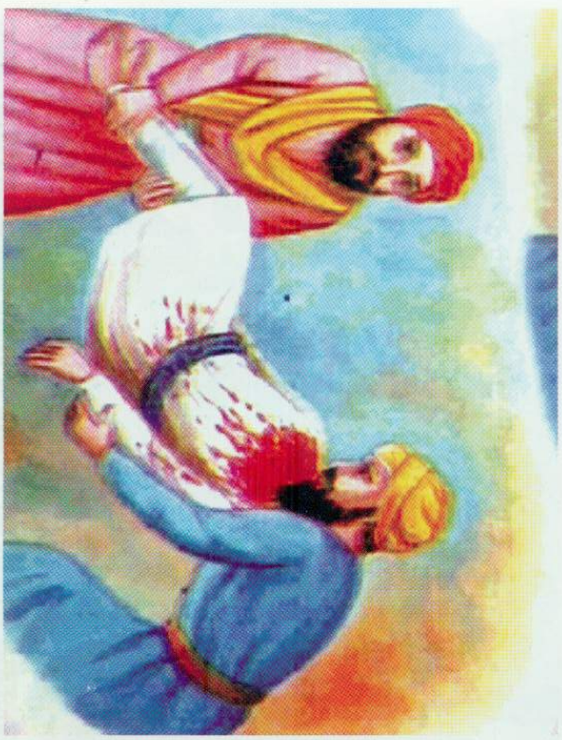

जब दिल्ली के चांदणी चौक मे जब गुरू तेग बहादर जी का सिर धड से अलग कर दिया और वहां पर पेहरा बिठा दिया ताकि कोई धड लेजा ना सके। उसी समय आंधी का फायदा उठाकर लखीशाह वंजारे ने शरीर को उठाकर अपने घर ले जाकर घर को आग लगा दि, इस प्रकार गुरूजी के शरीर का संस्कार किया गया।

कहानी पढे पन्ना १४ पर

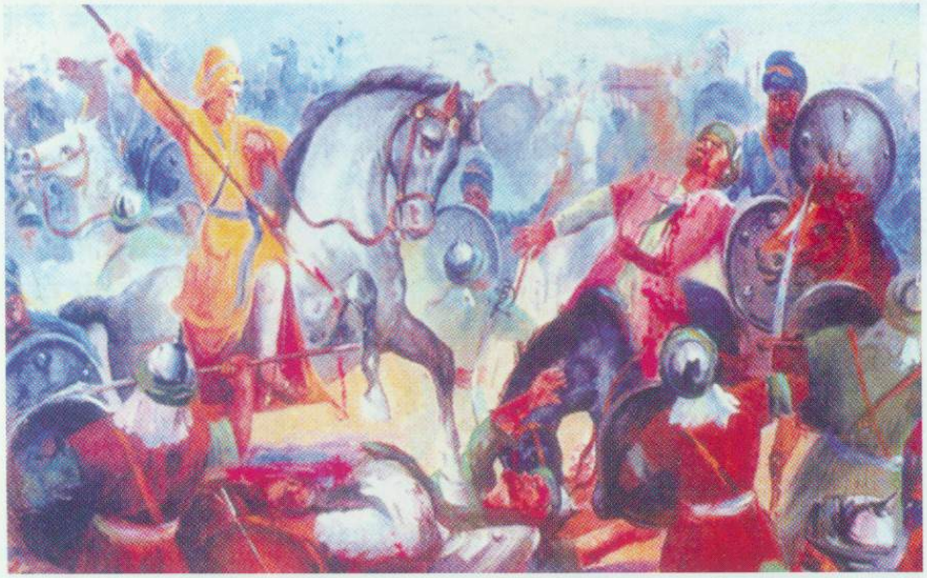

गुरू गोविंद सिंघजी का बडा सुपुत्र बाबा अजीत सिंघ चमकौर की रणभूमि में मुगलो को मौत के घाट उतारते हुए स्वयंभी इसी रणभूमि में शहीद हो गए।

कहानी पढे पन्ना ३५पर

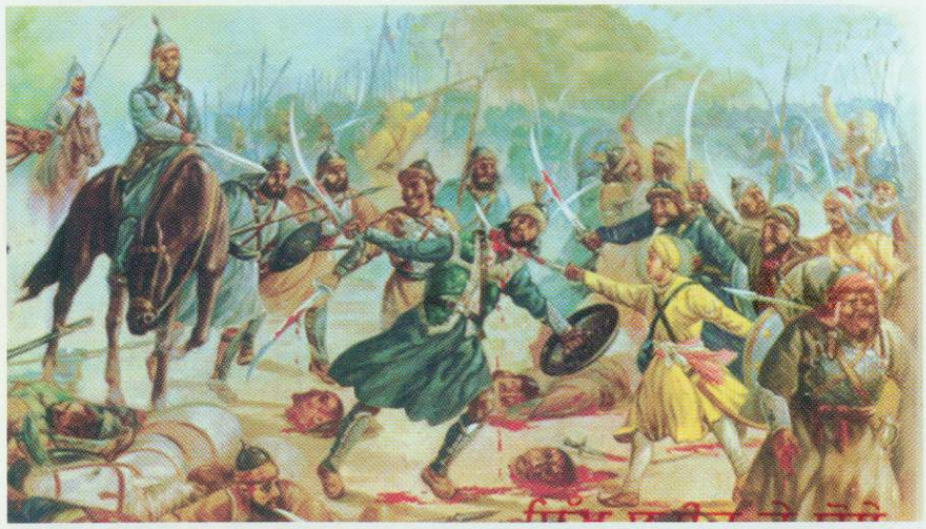

अपने बडे भाई अजीत सिंघजी को रणभूमि में शहीद होने के बाद बाबा जुझार सिंघ भी रणभूमि में आकर मुगलो को अपने हाथ दिखाने लगे वह भी इसी रणभूमि में शहीद हो गए।

कहानी पढे पन्ना ३५पर

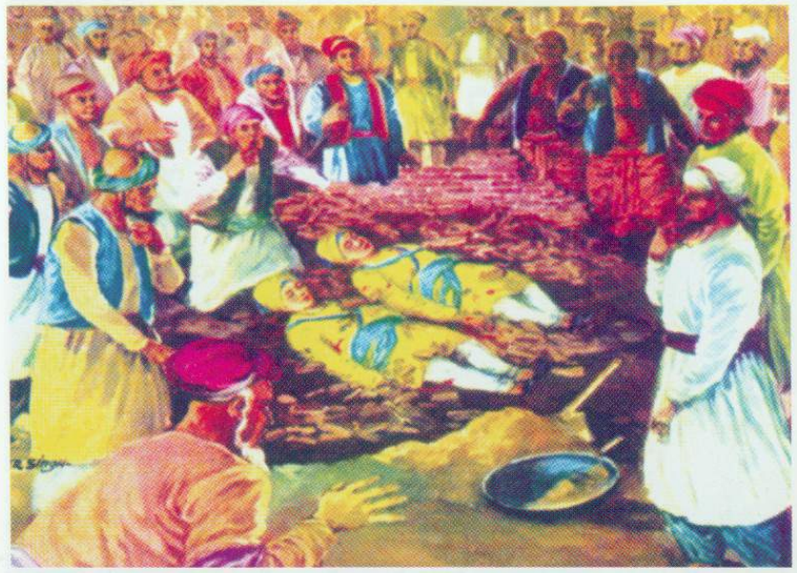

गोविंद सिंघजी के छोटे दोनो पुत्र जोरावर सिंघ जिनकी उम्र ७ वर्ष की थी। मुगलो ने इसलाम धर्म स्वीकार करने के लिए बडी लालचे दी, लेकिन इन छोटे शुरवीरो ने अपने धर्म ना छोडते हुए मुगलो की मौत की सजा को स्वीकार कर दिया।

कहानी पढे पन्ना ३५पर

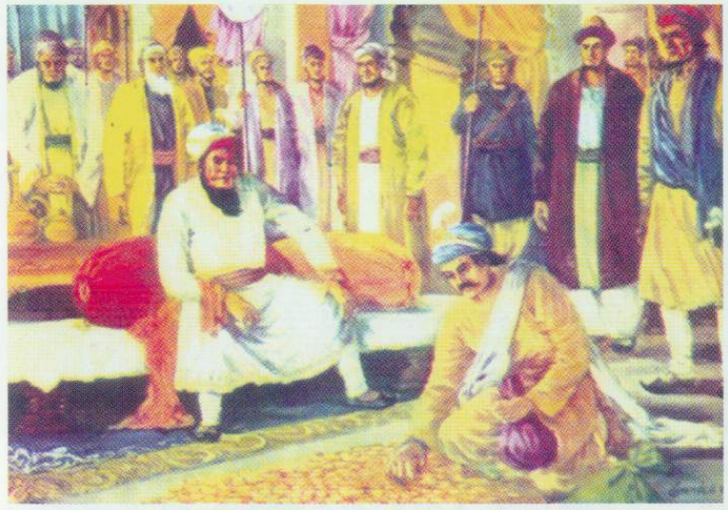

मुगलो ने इन दोनो का संस्कार करने के लिए जमीन ना देने की मनाई कर दी। गुरू का सिख एक व्यापारी टोडरमल ने जमीन की किमत लेने के लिए कहा तो मुगलो ने कहा जितनी जमीन चाहिए उतनी सोने की मोहरे जमीन पर बिछा दो तो जमीन ले सकते हो। टोडरमल जी जमीन पर मोहरे बिछाते हुए दिखाई दे रहे है।

कहानी पढे पन्ना ३५पर

सिखी की शान को कायम रखते हुए तथा मुगल सरदार वजीर खान के धिंडवरे को झुठा साबित

करते हुए भाई बोता सिंघ तथा भाई गरजासिंघ ने लडते लडते अपनी शहादत दे दी।
२७/३/१७३९

कहानी पढे पन्ना ४४ पर

मुगल शिपाई स्त्रियो पर अत्याचार करते हुए। १७५० से १७५३ तक

कहानी पढे पन्ना ४४ पर

बडे घलूघारे में जो युध्द महंमद गजनवी ने सिखो पर जबरदस्ती थोपा था, उस युध्द का दिया हुआ चित्र इस युध्द मे सिखों की उस समय की संख्या की आधी संख्या इस युध्द मे खत्म हो गई था जो लगभग ३५-४० हजार के करीब थी। ये युध्द ५/२/१७६२ इस युध्द मे सिखों के बच्चे, बुडे और स्त्रीयो की भी गीनती भी है।

कहानी पढे पन्ना ५६ पर

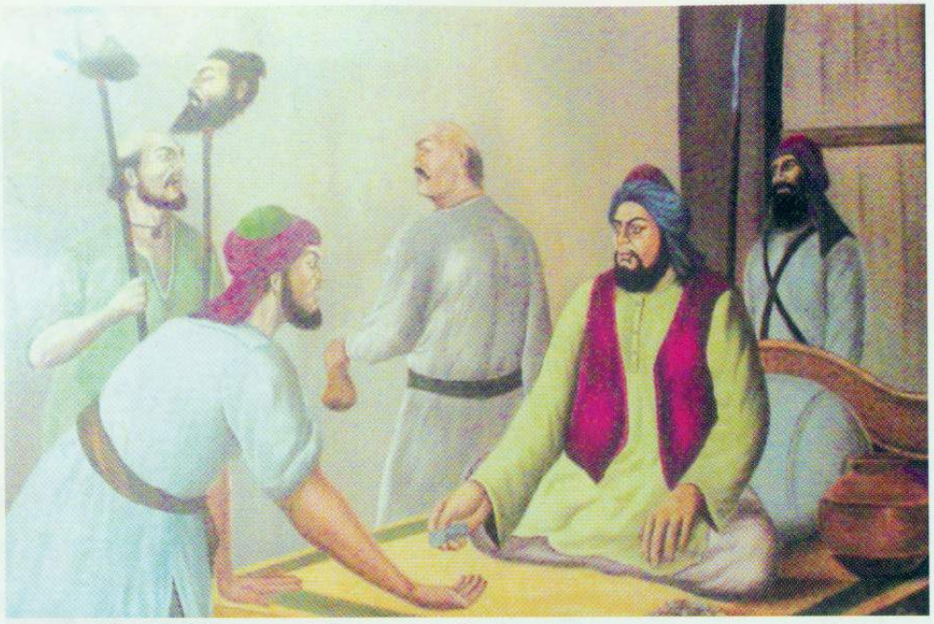

सिखों के सिरों का मुल्य देते हुए मुगल सिपाहा सालार।

कहानी पढे पन्ना ५६ पर

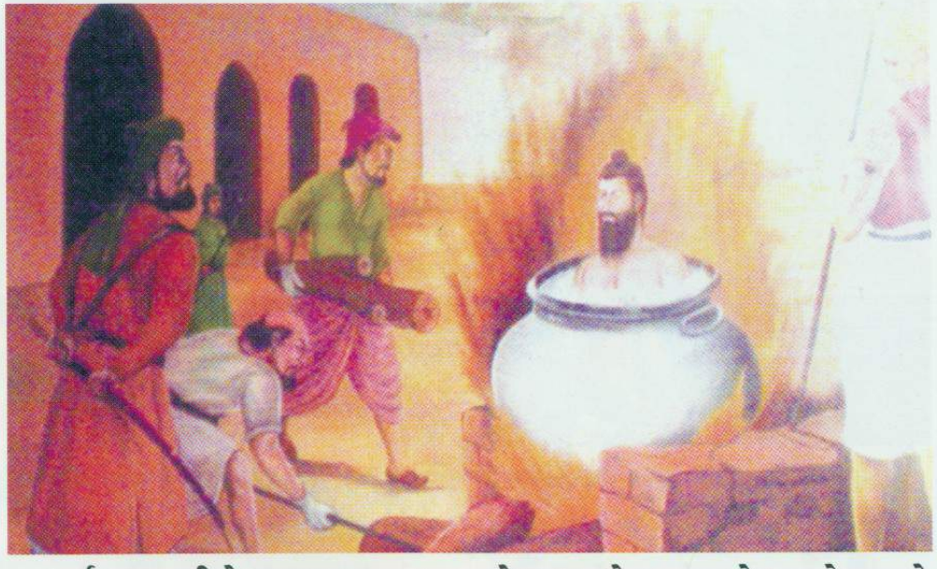

भाई दयालाजी ने इसलाम कबूल ना करने पर गुरू तेग बहादर के सामने उबलते पानी की देग मे उबालकर शहीद कर दिया गया। १०/११/१६५७

कहानी पढे पन्ना ५६ पर

मुगलो के शिपाई स्त्रियो पर अत्याचार करते हुए। १६४० से १६५३ तक

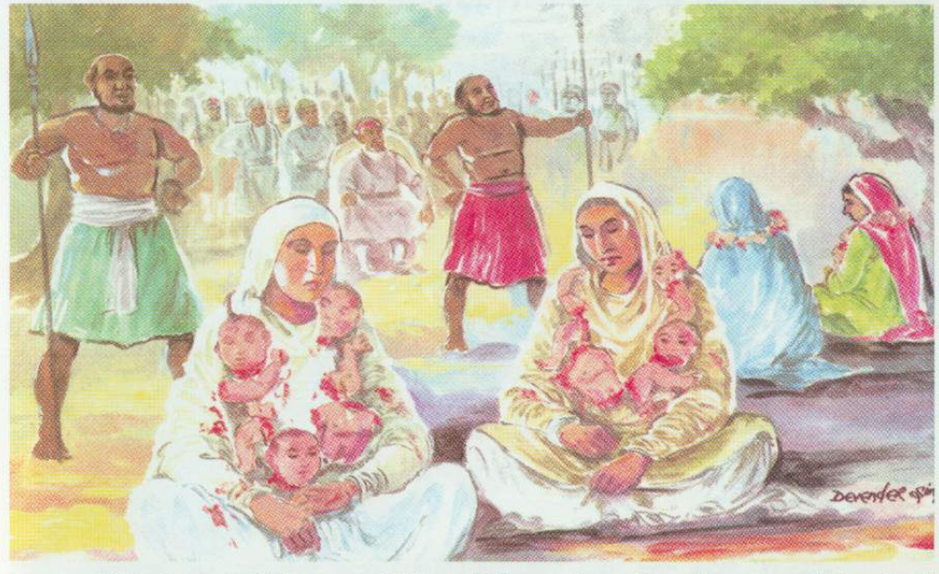

मुगलो के शिपाईओं ने माताओं के बच्चों के टुकडे टुकडे करके माताओं के गले में हार बनाकर डाले गए। इतना कुछ सहने पर भी माता ने अकाल पुरूख का शुक्र मनाया। १६४० से १६५३ तक

कहानी पढे पन्ना ४४ पर

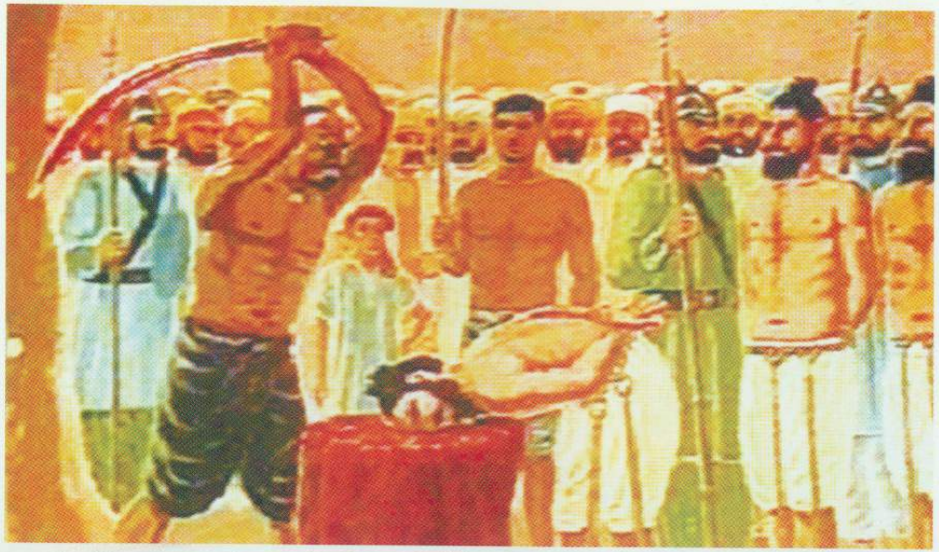

बंदासिंघ बहादर के शुरवीर शिपाईओं ने इसलाम धर्म कबूल ना करते हुए मौत को स्वीकार कर लिया, इस प्रकार के नजारे दिल्ली में करीब करीब आठ दिन चलता रहा और रोज १०० सिखों को शहीद किया जाता था।

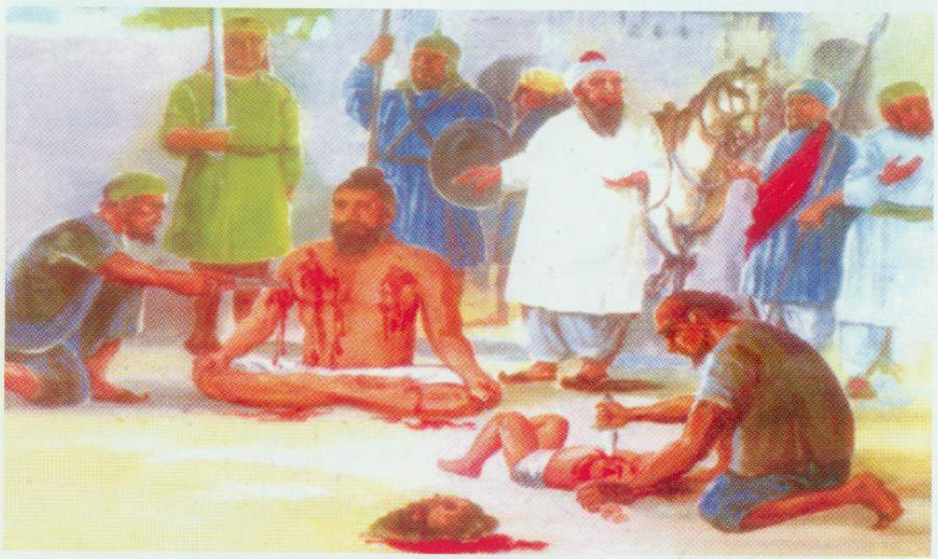

बंदासिंघ बहादर जिसने सिख राज्य स्थापित किया था। इसलाम धर्म ना कबूल करने पर मुगल शिपाईओं ने जमोरो से उसके शरीर को काट रहे है और उसके बेटे अजय सिंघ के कलेजे को निकाल कर उसके मुह मे जबरदस्ती ठूसा गया।

कहानी पढे पन्ना ६८ पर

पढा हुआ है, इसलिए तुझे जिद छोडकर इसलामधर्म कबूल कर लेना चाहिए। 'पंथप्रकाश' में जिक्र किया गया है :

दीन मुहंमदी कर कबूल तू सरदारी बड पाहैं,
तूंतो पढयो फारसी अरबी बुद्धीवान दिसैहैं ।
अभि नवेस क़ालेस एहु हठ छोड क्यो न सुख लैहैं,
खाइ पैन लिय पिदर तुमारे बूढा मरनों चैहैं ।
खांण पीण दी उमर तुमारी तूं क्यों जिंदडी दैहैं,
मजब धरम पर मूरख मरहैं चत्रन मरते कोहैं ।

भाई सुबेगसिंघ पर जोर भी डाला गया कि वो इसलाम कबूल करके दुनिया में अपनी जड बनाए रखे। इकलौते पुत्र के शहीद हो जाने के बाद दुनिया में उनके बाद कोई उनका नाम लेने वाला भी नहीं बचेगा। भाई सुबेगसिंघ ने धर्म गंवाकर, मर-मर कर जिंदा रहने की बजाय गर्व से धर्म पर दृढ रहते हुए मरने को प्राथमिकता दी। 'श्री गुर पंथप्रकाश' में बताया गया है :

सिक्खन काज सु गुरू हमारे, सीस दीओ निज सन परवारै ॥२७॥
चारे पुतर जान कुहाए, सो चंडी की भेंट कराए ।
हम कारन गुर कुलहि गवाई, हम कुल राखैं कौण बडाई ॥२८॥

अर्थात् गुरु साहिबान ने हमारे लिए चारों पुत्र कुर्बान कर दिए, सरवंश वार दिया। मैं अपनी कुल रखूं, यह कौन-सी कुल का यश है ?

भाई सुबेगसिंघ का उत्तर सुनकर यातनाओं का दौर फिर शुरू हो गया। बुरी तरह से मार-पीट की गई। पिता-पुत्र दोनों को इकट्ठा बांधकर, चरखडी पर चढाकर घुमाया गया। दोनों को आखिरी दम तक चरखडी पर घुमाते हुए इसलाम कबूल करने के लिए कहा जाता रहा, परंतु ये दोनों आखिरी दम तक यही बोलते रहे :

सुबेगसिंघ तब कुरनश करी, धंन चरखडी धंन यह घरी ॥८॥
चाढ चरखडी हमैं गिरावो, सो अब हम को ढील ना लावो ।
हम तो गुर के सिक्ख सदावैं, गुर हे हेत प्राण भल जावैं ॥९॥

(श्री गुर पंथप्रकाश)

यह घटना १७४५ ई.वी. की है जब पिता पुत्र दोनों को लाहौर में चरखडी पर चढाकर शहीद कर दिया गया । भाई शाहबाजसिंघ की आयु उस समय मात्र १८ वर्ष की थी । स: रतनसिंघ भंगू 'श्री गुर पंथप्रकाश' में लिखते हैं :

सुबेगसिंघ जंबर सुत नाल, चढदै चरख जिन जपयो अकाल ।
धन धन वै जिन सिदक न हारा, दीआ सीस मुख गुरू उचारा ।

- गुरुमति ज्ञान के सौजन्य से

सिंघां कदे झुकणा नहीं,
सिंघां कदे मुकणा नहीं ।
सिंघां नू झुकाउण वाला,
सिंघां नू मुकाउण वाला,
खिआल इक जुनून है ।
कोई जुलम, कोई सितम,
सानूं झुका सकदा नहीं,
सानूं मिटा सकदा नहीं,
किओंकि हाले तां साडीआं रगां विच,
कलगीधर दा खून है ।

चार साहिबजादों की लासानी शहादत

- स. गुरप्रीतसिंघ

सिक्खधर्म के प्रवर्तक श्री गुरु नानकदेव जी ने जनमानस को सदैव सात्विक मार्ग पर निर्भय होकर दृढ इरादे से चलने की प्रेरणा दी । उन्होंने लोगों को सांसारिक जिम्मेदारियों से डर कर, घर-बार त्याग कर वन में जाने की बजाये सत्य-मार्ग पर चलते हुए परमात्मा को पाने की शिक्षा दी । श्री गुरु नानक साहिब ने सत्य-मार्ग अपनाने तथा प्रभु-प्रेम में खुद को रंगने के लिए निम्नलिखित आव्हान दिया :

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ । सिरु धरि तली गली मेरी आउ ।।
इतु मारगि पैरु धरीजै । सिरु दीजै काणि न कीजै ।।

(श्री गु.ग्रं.सा.पन्ना १४१२)

पंचम पातशाह ने जब्र-जुल्म का विरोध करते हुए पावन शहीदी देकर गुरु नानक साहिब के उपर्युक्त फरमान को स्वीकार कर श्रद्धा-सुमन अर्पित किये । छठम पातशाह ने भी अन्याय के विरुद्ध कई जंगें लडीं । नवम्पातशाह श्री गुरु तेगबहादर साहिब ने भी हिंदूधर्म की रक्षा हेतु तथा मुगल सरकार के अन्याय एवं अत्याचार का कडा प्रतिरोध करते हुए स्वयं को न्यौछावर कर दिया । कुर्बानियां करने में दशमेश पिता का तो पूरे विश्व में कोई सानी नहीं है । यही नहीं, पूरा सिक्ख इतिहास ही शहीदियों की गाथाओं से भरा पडा है ।

साहिबे-कमाल श्री गुरु गोबिंदसिंघ जी द्वारा जनमानस में व्याप्त हर प्रकार की भेद-भावना को समाप्त करने, वहमों-भ्रमों को तोडने, सामाजिक रूढियों को गहरी चोट मारने हेतु सिक्खधर्म को विलक्षण स्वरूप बख्शिश करते हुए खालसापंथ की सृजना की । उन्होंने लोगों की भलाई की खातिर कई प्रकार की विकासगत गतिविधियां शुरू कर दीं । गुरु जी की बढती प्रसिद्धि एवं शक्ति देखकर पहाडी राजाओं तथा मुगल सरकार में ईर्ष्या रूपी हुताशन दहकने लगी थी । वे मिलकर गुरु जी की शक्ति को खत्म करने पर तुले हुए थे । उन्होंने गुरु जी से अनंदपुर साहिब का किला खाली करवाने

के लिए कई हमले किये । जब हर बार मुगल सेना को हार का मुंह देखना पडा तो उसने एक सांझा विशाल संगठन तैयार कर अनंदपुर साहिब को घेरा डाल लिया । घेरा कई महीनों तक चलता गया । किले के अंदर सिक्खों को खाद्यसामग्री की कमी आने लगी । भूख से सिक्खों की हालत दिन-ब-दिन नाजुक होती जा रही थी । भूख और प्यास से विव्हल होकर कुछ सिक्खों ने माता गुजरी जी के जहिरए गुरु जी को अनंदपुर साहिब का किला छोडने का निवेदन किया । उधर मुगल सेना कुरान की कसमें खाकर लिखित संदेश भेज रही थी कि अगर गुरु जी अनंदपुर साहिब छोड दें तो उनको बेरोक जाने दिया जायेगा तथा गुरु जी और उनकी सेना को किसी प्रकार की कोई क्षति नहीं पहुंचाई जायेगी । गुरु जी को मुगल सेना पर जरा भी भरोसा नहीं था । गुरु जी सिक्खों की नाजुक हालत देखकर किला छोडने को तैयार हो गये ।

जब गुरु जी एवं उनकी खालसा सेना ने अनंदपुर साहिब का किला छोडा तब मुगल सेना ने अपने वादे एवं कसमें तोडकर उनका पीछा करना शुरू कर दिया और परिणामस्वरूप सरसा नदी के तट पर घमासान युद्ध हुआ । अनपेक्षित युद्ध के कारण ऐसा माहौल बना कि गुरु जी का परिवार आपस में बिछुड गया । बडी विडंबना की बात है कि उधर सरसा नदी में बाढ भी आई हुई थी । नदी पार करते समय बहुत सारे सिक्ख, बहुमूल्य साहित्य एवं सामान नदी की भेंट चढ गया । गुरु जी बडे दो साहिबजादे कुछ सिंघों को साथ लिए मुगलों से लोहा लेते हुए चमकौर साहिब पहुंच गये । यहां पर युद्ध करते हुए बडे साहिबजादे साथी सिंघों सहित शहीदी-जाम पी गये । उधर माता गुजरी जी और छोटे साहिबजादे बाबा जोरावर सिंघ एवं बाबा फतहसिंघ को गुरु-घर का रसोइया गंगू ब्राह्मन मिल गया वो उन्हें अपने गांव सहेडी ले गया । वह माता जी के पास आभूषणों व मोहरों की थैली देखकर लोभवश हो गया । रात को उन्हें सोते हुए देखकर उसने उनकी आभूषणों व मोहरों वाली थैली चुरा ली । सुबह उठकर जब माता गुजरी जी ने पूछा तो वो 'उल्टा चोर कोतवाल को डांटे' वाली बात कहने लगा कि एक तो मैंने आपको पनाह दी, दूसरा आप मुझ पर झूठी लांछन लगा रहे हो । उसने अपने झूठ को छुपाने तथा सरकार से इनाम पाने के लिए मोरिंडा कोतवाली के कोतवाल को खबर करके माता गुजरी जी और दोनों साहिबजादों

को गिरफ्तार करवा दिया । कोतवाल ने माता जी तथा साहिबजादों को सरहिंद के सूबेदार वजीरखां के पास जा हाजिर किया । सर्द ऋतु की भीष्ण शीत में उन्हें ठंडे बुर्ज में कैद कर दिया । साहस और धैर्य की मूर्ति माता गुजरी जी अपने पोतों को पंचम पातशाह एवं दादा-गुरु नवम् पातशाह की बहादुरी भरी कहानियां सुनाकर समझाती हुई कहती हैं, "मेरे बच्चो ! तुमने भी अपने पूर्वजों की तरह धर्म पर आंच नहीं आने देनी । धर्म की आन, शान इसी तरह बरकरार रखनी है ।" दादी मां की साहस भरी शिक्षा पाकर साहिबजादों के इरादे और भी दृढ एवं मजबूत हो गये ।

अगले दिन साहिबजादों को वजीरखां की कचहरी में पेश किया गया । उन्होंने कचहरी में दाखिल होते ही ऊंचे स्वर में 'वाहिगुरु जी का खालसा, वाहिगुरु जी की फतहि' गजाई । यह सुनकर सूबा सरहिंद आश्चर्यचकित रह गया । साहिबजादों को धर्म के पथ से भटकाने के लिए कई प्रकार के लोभ-लालच दिये गये, किंतु सब असफल ! फिर उनको उनके पिता-गुरु और बडे साहिबजादों की मृत्यु का झूठा समाचार सुनाकर डराने की कोशिश की गई । इस वार्तालाप को कवि संतोखसिंघ ने इस प्रकार वक्तव्य किया है;

साहिबजादिओ पिता तुहारा, गढ चमकौर घेर गहि मारा ।
तहि तुमरे दै भ्रात प्रहारे, संगी सिंघ सकल सो मारे ।

साहिबजादों ने इसका उत्तर देते हुए निर्भय एवं निश्चिंत आवाज में कहा ;

श्री सतिगुरू जो पिता हमारा, जग महिं कौन सके तिंह मारा ।
जिम आकाश को किआ कोई मारहि, कौन अंधेरी को निरवारहि ।

सूबे सरहिंद ने अपने मंतव्य की पूर्ति हेतु आशा की किरण नजर न आती देखकर भूखे-प्यासे साहिबजादों का वापिस ठंडे बुर्ज में भेज दिया । अगले दिन फिर कचहरी में पेश किया गया । साहिबजादों को कई तरह के लालच दिये गये डराया, धमकाया गया, इसलाम कबूल करने के लिए अदिष्ट किया गया, किंतु वे अडिग एवं अडोल खडे रहे ।

सूबा सरहिंद ने मलेरकोटले के नवाब शेर मुहम्मदखां को उकसाते हुए कहा कि अगर तू चाहे तो इन बच्चों को मारकर इनके बाप के हाथों मारे गये अपने भाई की मृत्यु का बदला ले सकता है । शेर मुहम्मदखां ने मासूम

बच्चों की जान लेना घोर पाप एवं कायरता समझते हुए साफ इन्कार कर दिया और कचहरी से बाहर आ गया ;

बदला ही लेना होगा तो हम लेंगे बाप से ।
महफूज रखे हमको खुदा ऐसे पाप से ।

उधर सुच्चानंद बैठा सोच रहा था कि कहीं ऐसा न हो कि साहिबजादों को छोड ही दिया जाये । उसने सूबा सरहिंद को भडकाते हुए कहा, "ये सांप के बच्चे हैं । इनको पैदा होते ही मार दिया जाए तो अच्छा है, बडे होकर डंक ही मारते हैं । इन्हें छोडना कोई समझदारी वाली बात नहीं । हमें इन्हें जल्द से जल्द खत्म कर देना चाहिए ।" सूबा सरहिंद ने दीवान सुच्चानंद की बातों में आकर काजी को जोर देकर साहिबजादों के विरुद्ध फतवा जारी करवा दिया ।

सूबा सरहिंद ने साहिबजादों को जिंदा दीवार में चिनने का आदेश दिया । साहिबजादों को यह सुनकर भी कोई डर, कोई चिंता नहीं हुई । वे बिलकुल बेखौफ और प्रसंन्नचित्त होकर खडे रहे :

थी प्यारी सूरतों से शुजाइत बरस रही ।
नन्हीं सी सूरतों से थी जुरअत बरस रही ।
रुख पर नवाब के थी शकावत बरस रही ।
राजों के मुंह पे साफ थी लाइनत बरस रही ।

अगली सुबह होते ही सिपाही साहिबजादों बाबा जोरावरसिंघ एवं बाबा फतेहसिंघ को लेने जाते हैं, दादी-माता गुजरी जी अपने लाडले पोतों को तैयार करती हैं । उस वियोग समय का मार्मिक चित्र कवि अल्ला यारखां योगी ने 'शहीदानि-वफा' में इस प्रकार कलमबद्ध किया है :

जाने से पहले आओ गले लगा तो लूं ।
केसों में कंधी कर दूं जरा मुंह धुला तो लूं ।
प्यारे सरों पे नन्हीं सी कलगी सजा तो लूं ।
मरने से पहले तुमको दूल्हा बना तो लूं ।

आखिर वो दुखदायक एवं वियोगमयी घडी आ ही गई । साहिबजादों को जिंदा दीवार में चिन दिया गया । दीवार जब साहिबजादों की छाती तक पहुंची तो गिर गई, जिसके कारण मृदुल कलियों की भांति शरीर बेहोश हो

गये । फिर शाशलबेग एवं बाशलबेग नामक जल्लादों ने मासूम साहिबजादों का सर कलम कर दिया । इस तरह छोटे साहिबजादे शहादत का जाम पी गये, किंतु मुगल सरकार की ईन नहीं मानी । यह साका मानवतावादी धर्म की विजय और अत्याचारी एवं दुष्टतापूर्ण शासन की पराजय को प्रत्यक्ष रूप में बयान करता है । जब साहिबजादों की शहादत का शोक समाचार माता गुजरी जी को पहुंचा तो वे भी ठंडी आह भर कर परमात्मा को याद करते हुए गुरु-चरणों में जा विराजीं । माता गुजरी जी तथा छोटे साहिबजादों का अंतिम संस्कार करने हेतु टोडरमल नामक व्यापारी ने सोने की मोहरें बिछाकर सरकार से जगह मोल खरीदी और माता जी एवं छोटे साहिबजादों का अंतिम संस्कार किया ।

- गुरमति ज्ञान के सौजन्य से

सूरा सो पहिचानीऐ,
जुलरै दीन के हेत ।
पुरजा पुरजा कटि मरै,
कबहू न छाडै खेतु ।

सरहंद का साका

– तारासिंघ गोरोवाडा 'जाचक'

मैं पेश कर रहा हूं साका कमाल का ।
दश्मेश के दुलारों का सुंदरी के लाल का ।
भारत में उस जमाने में औरंग का राज था ।
दिल्ली का तख्तो ताज भी उनके ही हाथ था ।
महजब के नाम पर वो करता जुल्म था बडा ।
इन्सान के वो रूप में शैतान था खडा ।
मुगलों दे आज देश में आतंक फैला दिया ।
गोबिंदसिंघ को पकडलाने का ऐलान था किया ।
उसके कुटुंब को उसे जो पकड लायेगा ।
रूतबे के साथ साथ ही इनाम पायेगा ।

लालच में आज गंगु ने था जुल्म ढा दिया ।
फत्तेह सिंघ जोरावार को बंदी बना दिया ।
लाये दोनों जब कचहरी में बंदी के रूप में ।
ऐसे चमक रहे थे जैसे मोती धूप में ।
चेहरे पे उनके नूर था लाली दमक रही ।
मानो अंधेरी रात में बिजली चमक रही ।
आते उन्होने जोर से थी फतेह बुलाई ।
अपने जोशिले नारो से कचेरी हिलाई ।
सुन कर जोशिले नारो को सब दंग हो गये ।
बैठे थे जिन रंगो में वो सब भंग हो गये ।

बच्चों को आया देश कर काजीने यों कहा ।
करलो कबूल दीन को सिखी में क्या पडा ?
लेना तुम्हें क्या धर्म से अंजान हो अभी ।
करलो कबूल दोनों ही इस्लाम को अभी ।
बन जाओ मुसलमान तख्तो ताज मिलेगा ।
सुखों की जिंदगी का, सारा साज मिलेगा ।
कहना न मेरा माना तो तुम मौत पाओगे ।
जिंदा दिवारों में अभी चिनाये जाओगे ।
नन्नी उमर ये जान कर मैं तरस खा दिया ।
कब से तुम्हें यमलोक में, होता पहुँचा दिया ।

बस कर बच्चों नें कहा, काजी को जोर से ।
लानत है ऐसी जिंदगी, धरम को छोड के ।
सिखी हमारी जान है, सिखी ही शान है ।
सिखी ही तख्तो ताज और सिखी ईमान है ।
जिंदा चिनाओ दिवार में या सर को काट दो ।
करो देह की बोटी बोटी और शेरों में बांट दो ।
इस मौत का न डर दिखा, दिवाने इस के हम ।
शमा हमारी मौत है, परवाने इस के हम ।
जब तक रगो में खून है, सिखी निभायेगे ।
करले तू कितने जुल्म भी, सर न झुकायेंगे ।

सुन कर जवाब बच्चों का, आया हंकार में ।
दिल में खुदा का खौफ ना, काजी मक्कार में ।
उन बच्चों पर उस मौत का, फतवा लगा दिया ।

सरहंद की दिवारों में, जिंन्दा चिना दिया ।
हो गये शहीद कौम के, लिये वो दो कुमार ।
कुर्बानियों से कौम में, है आ गई बहार ।
हो कर शहीद कौम की, वो शान कर गये ।
सदियों की मुर्दा कौम में, थे जान भर गये ।
ऐसे शहीदों पर ही, देश करता मान है ।
'जाचक' भी बार बार, उन्हें करता प्रणाम है ।

* *

आजादी मांगने से नही मिलती ।
बहादुर लोग अपने जोर से आजादी लेते हैं ।
डरपोक लोग तो मिली हुई आजादी को
कायम नही रख सकते । जेकर बहादुर बनना है तो
गद्दर करो जेकर गद्दर करना है तो
सिर पर कफन बांध कर मैदाने जंग में
आ जाओ । देश तुम्हारा इंतजार कर रहा है ।
जरुरत है निडर और बहादर शिपाहियों की
तनखाह मौत इनाम शहिदी पेनशन
आजादी मैदान इस कार्य में जरूर हिसा ले ।
देशवासी आपका इन्तजार कर रहे हैं ।

शहीद भाई तारूसिंघ जी

- तारासिंघ गोरोवाडा

भाई तारूसिंघ जी पुल्हा गांव, जिल्हा लाहौर के वसनीक थे । आप बडे ऊंचे विचार वाले तथा सत्यता प्रेमी थे । अकाल पुरुष का नाम जपना तथा ईमानदारी से मेहनत मजूरी करना तथा सब के साथ प्रेम भावसे बांट कर खाना ये उनका सदैव नियम रहा । आप खेती बाडी का काम करते थे । उनकी माताजी तथा बहनजी घर का पकाने में काम करते थे । उन दिनों सिखों पर अति जुल्म होता था । जरूरत से ज्यादा मुगलोंद्वारा सखती बरती जाती थी । जिस कारण सिख परिवार जंगलो में छुपे रहते थे । भाई तारूसिंघजी का नित नियम था घर से रोटियां पकवाकर रात को जंगलों में जाना तथा जंगलों में छुपे खालसे को खिलाना था । जडियांले के निरंजिये महंत हरभगतने जकरीआ खां सुबेदार लाहौर के पास जाकर चुगली खाई कि भाई तारूसिंघ हुकूमत के विरुद्धी सिंघो को रोटिआं खिलाता है और सहायता करता है । सुबेदार ने उसी समय भाई तारूसिंघ को गिरफ्तार करने के लिये हुकम दे दिया ।

शिपाही जकिरियाखां के हुकम से भाई तारुसिंघ को गिरफतार करके ले आये भाई तारुसिंघ के आते ही जकिरियाखां ने भाई तारुसिंघ के केस काटने का हुकुम दे दिया । तभी भाई तारुसिंघ ने विनंती की मुझे सजा देनी है दो मगर केस न काटे क्यों कि केस रखना सिख का धर्म है । इसलिये चाहो तो मेरी खोपडी काट दी जाये । भाई तारुसिंघ की विनंती को मानते हुए जलाद को खोपडी उतार देने का हुकम दे दिया । भाई तारुसिंघ ने अपने वाहेगुरू को याद करते हुए अपने प्राणों का बलिदान दे दिया, पर सी तक न उचारी ।

भाई तारू सिंघ का प्रण

धर्म के हेत शरीर ये मेरा प्रण पालकर खाक में साथ मिलेगा ।
धर्म और चित अडोल खडा, भले ब्रह्मांड हिले, पर ये दिल न हिलेगा।
साजो समान त्रिलोक राज और कुबेर के द्वार भले खुले ।
ऐसा दृश्य देखकर किंचित भी तारूसिंघ का चित्त न हिलेगा ।

* *

शहीद भाई बोतासिंघ और गरजासिंघ

ले. - तारासिंघ गोरोवाडा

सन १७३९ ई. वी. का सिख इतिहास में विशेष स्थान है क्योंकि वक्त की हुकूमत द्वारा सिखी पर बडी सखती की गई थी । मुगलों ने फैसला कर लिया कि सिखों की नसल को खत्म करना है । उस समय सिखों के घर घाट लूट लेना कोई जुर्म नही माना जाता था । तसबी पकडे हुए मुसलमान एवं खुशामदी हिंदु इस काम में पूरा पूरा साथ दे रहे थे ।

किसी सिंघ को पकडवाने में मदद करनेवाले को दस रुपये जिंदा पकडकर लानेवाले को अस्सी रुपये और सर काटकर लानेवाले को पचास रुपये मिलते थे ।

हुकूमत की तरफ से जुलम की बडी आंधी चल रही थी । इस आंधी से बचने के लिये सिख अपना घर बार छोडकर जंगलो पहाडो और मरुस्थलों का आसरा ले लेते थे । पंजाब के गवर्नर खान बहादर जकरिआ खांन ने ऐलान कर दिया कि गांव गांव जा कर दिंडोरा पिटाया जाये कि सिख खत्म कर दिये गये हैं । इतने प्रापोगंडा करने के बावजूद भी सिख छिप छिपाकर श्री अमृतसर हरिमंदिर साहिब के दर्शन करने पिछे नही हटते थे । दर्शन एवं स्नान करते हुए कई सिख आपने शरीरो की आहुती दे चुके थे फिर अपने गुरु स्थानों प्रति श्रद्धा और हक्क का प्रगटावा का इतना बडा भयानक मूल्य चुकाते हुए भी डरते नहीं थे ।

इस महत्त्व पूर्ति के लिये गुरू के लाल भाई बोतासिंघ एवं भाई गरजासिंघ श्री तरन तारन से होकर श्री अमृतसर साहिब की तरफ अमृतसर सरोवर स्नान एवं दर्शन के लिये जा रहे थे । ये सिंघ रात को सफर करते थे । दिन में वृक्षों की झाडियों में समा बिताया करते थे । अपनी मंजिल की ओर बढ रहे थे । इन संत सिपाहियों सिंघों की एक सिपाही लाहौर से दिल्ली जानेवाली सडक पर नूरदिन की सरांह के पास दो मुसलमान सिपाहियों ने पेडों के पीछे देख लिया तो लगे आपस में बातें करने मुझे तो पेडों के पीछे

सिंघ छिपे हुए लगते हैं ।

दूसरा : 'अरे नही, सिख तो बडे बहादर होते हैं वो तो छिपते नही पहला अगर तू कहे तो चल कर देख लेते हैं । दूसरा अरे हमें क्या लेना करना है देखकर, अगर निकल पडे तो हमारी खैर नही । पहला : अरे ! तुम तो यूं ही डरे मरे जा रहे हो । जकरिया खांन ने तो ऐलान किया कि सिख खत्म कर दिये ।

वो दोनों मुसलमान यो ही बाते करते जा रहे थे परन्तु उन दोनों की बातें छिपे हुए गरजासिंघ तथा बोतासिंघ का कलेजा चीर कर रख गई । दोनों सिंघों ने जकरियाखांन के इस प्रापेगंड को झूठा सिद्ध करने का फैसला कर लिया । वृक्षों के पीछे से दोनों निकलकर सडक पर आ गये दोनों के हाथों में लकडी के मजबूत लठ (सोटे) थे । सडक के किनारे नूर दीन की सराह को उन होने अपना ठिकाना बना लिया । आगे आने वालों से टेक्स वसूल करने लगे । कोई बैलगाडीवाला आता तो कहते भाई यहां सिखों का राज है । गाडी तो आगे जायेगी अगर एक आना टेक्स भरोगे तो । अगर कोई गधे माल ढो कर ले जाता तो कहते । पैसा दोगे गधा तो आगे जायेगा और कह देते आगे जाओगे तो वहां के लोगों को बता देना नूरदीन की सराह के आले दुआले सिखों का राज है ।

इस प्रकार कितने समय तक ये टेक्स वसूल करते रहे परन्तु हकूमत की तरफ से कोई कारवाई नही हुई । लोग टेक्स दे जाते और हैरान होते की और कहते जकरिया खांन का ऐलान झूठा है । वो तो कहता था सिख खत्म हो गये पर यहां तो सिखों की हकूमत कायम हो गई है ।

हकूमत को झूठलाने के लिये इन सिखों ने ये नाटक रखा था । ये चाहते थे तो हकूमत से दो हात कर सकते थे । परन्तु हकूमत की तरफ से अभी तक कोई कारवाही नही हुई । अपने विचारों को रंग न चढते देख कर सिंघ उतावले हो गये ।

भाई बोतासिंघ ने जकरिआ खांन को एक चिठी पंजाबी में लिखी चिट्ठी के इस प्रकार लिखा था

चिट्ठी लिख तुम बोता
हात में सोटा (मोटा डंडा) विच राह खलोता

आना लाया गडे तूं
पैसा लाया खोता (गधा)
जा आखी भाबी खाने नूं
अैऊ आखें सिंघ बोता ।

अनुवाद : चिठी बोतासिंघ लिख रहा है । हाथ में एक मोटा सा सोटा लिये खडा है । यहां से जानेवाली गाडी का टेक्स एक आना है और गधे पर टेक्स पैसा है । जाकर खांन भाबी से ये कह देना ।

चिठी अपने ठिकाने पर पहुंच गई । चिठी को पढकर गवनर जकरिआखांन गुस्से से तिलमिला उठा । अरे ! नूरदीन का सराह पर कितनेक सिखों का कब्जा है । आगे उतर मिला जी वहां तो दो सिंघ ही दिखे थे । उनके पास कोई बंदूक नहीं । दोनों के हाथों में मोटे मोटे सोटे और तलवारें थी ।

सिखों को खत्म कर देने को ऐलान करने वाले और अपने आप को बहादूर खांन कहलाने वाले जकरिया खांन ने जलालूदीन जनरैल को हुकुम दिया । दो सौ घुडस्वारी शस्त्रधारी फौजलेकर जाओ । सिखराज का ऐलान करने वालों दो सिखों को फौरन जिंदा गिरफ्तार कर के लावो ।

बेचारा जकरियाखांन और कर भी क्या सकता था । वो जानता था सवा लाख से एक लडावू कहनेवाले गुरु के सिंघ ने इन दसबीस सिपाहिओं के वश में आनेवाले नहीं है ।

दो सौ घोडस्वार हथियार बंद फौजियों का जथा जलालूदीन की अगवाई में मारो मारो करती हुई नूरद्दीन की सराह तक आ पहुंची । दूर से ऊंची धूल उडती देख सिख समझ गये कि हकूमत को सिखराज होने की खबर पहुंच गई है ।

अभी फौजियां की धाड सिखों को घेरे में लेने की तय्यारी कर ही रहे थे कि बोतासिंघ और गरजासिंघ ने बडी ऊंची आवाज में जैकारे गजाते हुए दुश्मनों को ललकारा । अरे आओ अपने आप को शूरवीर बहादूर कहलाने को जरा अकेले हमारे साथ भिडकर देखो तो तुम्हें हम मानेंगे ।

जलालदीन ने बहादर सिपाहियों को आगे भेजा सिखों ने आँख झपकते में उन दोनों सिपाहियों को यमलोक पहुंचा दिया । फिर जलालूदीन

ने दो दो कर के आठ सिपाही भेज दिये । उनका भी वही हाल हुआ अपने बीस सिपाहियों लाशों को देख कर जलालदीन जनरेल का सबर टूट गया । अब उसने अपने सभी सिपाहियों को उन दोनों पर हमला करने का हुक्म दे दिया ।

बस फिर क्या था सिंघ जैकारे छोडते हुए आगे बढते गये और पीठ के साथ पीठ लगाते हुए मुगलों को खत्म करते गये । दस बीस सिपाहियों को यमसदन पहुंचाकर सिंघ शहीद हो गये । गुरु के लाल ये बता गये कि सिखों को खत्म करनेवाले स्वयं खत्म हो गये । सरदार गरजासिंघ की शहीदी पुकार पुकार कर कह रही है सिंघों सिखी की आन और शान और बाने को कायम रखो टूट जाओ पर जालम के आगे झुकना नही । अपने जैकारे सदा बुलंद रखो ।

भाई बोतासिंघ और गरजासिंघ की शहादत सिखों की स्पिरट, जुरत और अनख की एक जीती जागती मिसाल है ।

* *

जिस कौम का होता इतिहास जिंदा,
वो कौम कभी मर सकती नही ।
चाहे उस कौम पर आये हजार संकट
वो कौम कभी डर सकती नही ।

शहीद सुखासिंघजी स. महिताबसिंघजी

ले. - तारासिंघ गोरोवाडा

सन १७३४ में भाई मनिसिंघजी के बंद बंद काटकर शहीद किया गया । इस शहिदी से सिखो मे जोश और गुस्से की लहर भर गई । सिखोने ये मन बना लिया कि जिस जिस का भी इस शहिदी में हाथ है उस से बदला लिया जाए । खोज करने पर ये पता लगा कि अबदुल रजाक की निगरानी में शहादत दी गई । उस समय अबदुल रजाके के साथ गिरफतारी के समय लजपतराय भी साथ था । भाई मनीसिंघ के भतीजे अघडसिंघ ने काजी अबदुल रजाक़ का कतल कर दिया । जिस काजी ने भाई मनीसिंघ के दूसरे भतीजे बुराजसिंघ ने लाहौर जाकर उसका भी कतल कर दिया इसके बाद मुगलों ने सिंघो पर बडी सख्ती बरतनी शुरू कर दी । इस समय जकिरियाँखान को सिखों पर जुलम करने का मौका मिल गया । उसने चौधरीयों को मुकादमों को और फौजदारों को खास संदेश भेज दिये । भंडिआले का चौधरी मसा रंगड सिंखों पर बडा जुलम करने लगा । जब मुगलो ने अमृतसर के हरिमंदिर पर कबजा कर लिया तो उन्होंने मसा रंगड को पूरी छूट दी गयी की वह हरिमंदर की मनमोक्त बेअदबी करे वैसे देखे तो मसा था भी दुराचारी और शैतानी विचारों का । उसने पहले हरिमंदिर सहिब में हुका पीना शुरू कर दिया और वेश्या की महफिल सजाने लगा अब वहा रोज वेश्याऐं नाचने लगी जैसे ये कुछ सिखों को पता लगा तो ये हरिमंदिर की दुरदशा सिखों से सहारी न गई । एकसिंघ भाई बुलाकासिंघ जो कंग गांव का रहने वाला था । उसने मसे की गंदगी फैलानी की करतूते रेगिसतान तथा बीकानेर के लोगों को बताई की मसा रंगड ने पवित्र हरिमंदिर में नीचता भरे कुकर्म कर रहा है । ये सुनकर वहां के जथेदार भाई बुढासिंघ ने कहा ये खबर सुनकर तू वहां पर ही मर क्यों नहीं गया । अगर उस मसा रंगड के टुकडे टुकडे कर आते तो आगे से वो हरिमंदिर साहिब में घुसने की तोबा तोबा कर उठते । भुलकर भी पवित्र हरिमंदिर साहेब में जाने की कभी भूल न करते । बुलाकासिंघ ने कहा मैं तो

संगत को खबर देने आया था । मै मरने से नही डरता हूं । आजकल मसा रंगड बडे घमंड से कह रहा था । अब सिंघ कोई बचे ही नही जो अनख धर्म और शान के लिये मर सकते थे । अब तो नाम के सिंघ रह गये है । उपर की वात सुनकर सिखों की गुस्से से आंखे लाल हो गई । सिखों के डोले फडकने लगे उनके हाथ तलवार की मूठ पर अपने आप चले गये । वो सोच रहे थे सिरवार कर हम धर्म की रक्षा कर सकते है ।

ये सुनकर जथेदार भाई बुढासिंघ ने कहा मसा रंगड का सिर काट कर ले आये तो गुरू चरणों में स्थान मिलेगा और शहीद हो गये तो गुरुचरणों की गोदी प्राप्त होगी । जिनके लिये जो धर्म इमान बेचें डरकर भागे तो आज भी मरे कल भी मरे । गुरुमार्ग पर चलकर शहीद हो गये तो जनम मरन सफल हो जायेगा । ये सुनकर भाई सुखासिंघ और महताबसिंघ दोनों संगत में उठ कर खडे हो गये और साध संगत से मसा रंगड से बदला लेने की आज्ञा मांगी । जथेदार भाई बुढासिंघ ने जैकारा छोडा और सारी संगत ने इन दोनों की सफलता भी अरदास बेनती की ।

रात होते ही दोनो मसारगंड को कतल करने का प्लान करने लगे जहां रात को आराम कर रहे थे वही नजदीक ही कुंभार की मटके पकाने की भट्टी थी । उन्होने सोचा पका हुआ बटका लेकर उसके टुकडे टुकडे करने से थेली में भर लेने से उसकी आवाज भरे हुए अशरफियों की आयेगी । दोनों ने सोचा मसा रंगड को लगान देने के लिये चौधरी बनकर जायेंगे । सुबह होते ही बगैर किसी रुकावट के दोनो मसा रंगड के मुकाम पर चल पडे । पर दोनों ने घोडो की लगामें पकडी और आगे के सफर पर निकल पडे । जाने से पहले उन्होंने मडको के टुकडे टुकडे कर के दो बोरिआं भर ली और सीधा अमृतसर का रास्ता ले लिये दोपहर तक दोनो हरिमंदर की नजदीक पहुंच गये । गर्मी के दिन होने से पहरेदार परिक्रमा में सुस्ता रहे थे । दोनो ने अपने घोडे एक पेड से बांधे और थेलियां कंधे पर लेकर मसारगंड के पास पहुंचे । मसारगंड शराब क नशे में नाच गाने के खियाल में बेधुंध था । वहां पहुंचकर सिंघ ये दृष्य देख न सके जहां कभी वो सर झुकाते थे । वहां ये कुकर्म हो रहा हो कंधे पर चौधरियों के थैले लिये हुए मसा रंगड ने देखा तो खुशी से पूछा भाई कौनसे गांव से आये । चौधरी के भेख में भाई सुखासिंघ ने का कहा भाई

अरसे से हिसाब करने के बारे मे सोच रहे थे । हिसाब तो आप के साथ किसी दिन करना ही है । गैरतवाले अपना हिसाब समय कर लेते हैं । पर सुखासिंघ ने नम्रता से सभी बात समझा दी । और जिस पलंग पर मसा रंगड बैठा था उस पलंग की नीचे दोने ने थैलिया रख दी । मसा रंगड ने जैसे ही झुककर थैलियां उठाने की कोशिश की तभी बडी फूर्ति से महताबसिंघ ने तलवार म्यान से निकाल कर बिजली की फर्ती से मसेकी की गर्दन काट डाली । बडी फुर्ती से सुखासिंघने वहां बैठी चंडाल चौकडी का तलवार से सफाया कर दिया । मसा रंगड के सर को भालेपर अटकाकर सुखासिंघ और उनका साथी अपने घोडों को लेकर वहां से निकल पडे । * *

॥ १ ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥

पुस्तकों की यादी

१. जपुजीसाहेब, २. नामा म्हणे, ३. ऐक रे मना,
४. सुखमणी साहेब, ५. म्हणे कबीर,
६. औंकार आणि सिध गोसटि

मूल्य : प्रेम और श्रद्धा

७. श्री गुरुग्रंथसाहिब संपूर्ण मराठी में भावानुवाद
सात खंडों में उपलब्ध है ।

इस ग्रंथ में संपूर्ण गुरुबाणी, कठीण शब्दों के अर्थ तथा भावानुवाद, मजबूत बाईंडिंग, प्लास्टिक के सुंदर कव्हर सहित ।

मूल्य : १५००/- रुपये ।

- ग्रंथ की उपलब्धि के स्थान निम्नानुसार हैं । -

अध्यक्ष गुरनामसिंघ होरा
मोबा. : ९३२५६३६१३६/०२० २६१२१६३३
गुरुद्वारा श्री गुरुसिंघ सभा, पूना.
४३१/४३२ गणेशपेठ,
दगडी नागोबाशेजारी, पुणे २.

तारासिंघ गु. गोरोवाडा
मोबा. : ९८२२८६७७७८
राजमुद्रा गृहरचना,
सी ब्लॉक १ समोर.
१०३७, धनकवडी, पुणे ४११०४३.

एक सिख बच्चे की शहादत

ले. - तारसिंघ गोरोवाडा

बंदासिंघ बहादर के नाम से जालम लोग थर थर कांपने लगते थे । बंदासिंघ बहादर ने उन्हे ऐसी चोट दी सभी जालिम जुलम करने से डरने लगे । जब फरखसीअर ने दिल्ली का तख्त संभाला तो उसने सिखों की बढती हुई ताकद शक्ति को सहन न कर सका ।

बाबा बंदासिंघ और उनके साथिओं को जब गुरुदास जंगल की गढी मे घेर लिया गया । सिंघो ने बाबा बंदासिंघ के अधिपत्य के नीचे मुगलो की फौजो का ढट कर मुकाबला किया अंत में अपने साथियों समेत बंदासिंघ बहादर दुशमनों के हाथ आ गये । सिंघों को पकडकर दिल्ली में रोजाना १०० सिंघों को शहीद किया गया । इन्ही सिघों में एक नौजवान भी था जिसकी उमर केवळ १८ साल की थी और वो अपनी माता का एकमेव सहारा था ।

बूढी मां बडी मुश्किल से फरखसीअर के पास पहुंची । और बहाना बना कर कहने लगी मेरा बच्चा सिख नही है । इसे घलती से गिरफतार कर लिया गया है । मेरे बचे को छोड दिया जाये बादशाह बडा खुश हुआ क्यों कि कोई भी सिख माफी नही मांगता इसलिये उसने सोचा हम लोगों को बतायेंगे कि एक सिंघ ने माफी मांगी है । बादशाह ने एक पैगाम लिख भेजा जेकर नौजवान बच्चा ये कह दे कि मैं सिख नहीं हूं तो उसे छोड दिया जाये ।

नौजवान की माता बादशाह का ये हुकम लेकर वहां पहुंची जहां पर सिखों के साथ इस बच्चे का भी कत्ल होना किया जाना बाकी था । उसने बादशाह का हुकुम कोतवाल के हवाले कर दिया और ये बच्चासिंघ नही इसे गलती से गिरफतार कर लिया गया है । फिर अपने बच्चे के पास जाकर कहा कि तू कह दे कि मै सिख नही हूं । तेरी जान बच जायेगी । जब गुरू के बच्चे ने ये बात मां की सुनी तो नौजवान बडी उंची आवाज में कह उठा मेरी मां झूठ बोल रही है, मेरी मां झूठ बोल रही है । मै पक्का सिख हूं । गुरू का सिख हूं । मुझे सिखी प्रिय है । मुझे जल्द से जल्द शहीद करो । सिखी ऐसी

नही जब मरजी अपना ली जाये जब मरजी हो छोड दी जाए । मुझे जान से सिखी ज्यादा प्यारी है । मै आखिर तक सिख ही रहूंगा ।

बच्चे की उत्तर सुनकर मां कांप उठी । वो कहने लगी बेटा एक बार कह दे मै सिख नही हूं । तेरी जान बच जायेगी । बाध में फिर सिख बन जाना । मां की बात बच्चे ने एक न सुनी और बडी जोर जोर से कहने लगा मैं सिख हूं, मैं सिख हूं । मेरी मां झूठ बोल रही है । सिख कभी झूठ नही बोलता मैं सिख हूं । जलादों के लिये ये एक नई मिसाल थी । कोई भी सिख बडे से बडे लालच और डरावे में नही आता वो शहीद हो जाता है पर अपना धर्म नही छोडता ।

इस प्रकार बच्चा शहीद हो गया लेकिन उसने सिखी धर्म को नही छोडा । उसने सिखी की मान मर्यादा सिखी केसो स्वासों तक निभाई । इस से ये प्रतीत होता है सिख के लिये सिखी से बढकर दुनिया की कोई चीज प्यारी नही है । सिख प्राण तो दे सकता है सिखी के नियम असूलों को नही छोड सकता ।

* *

जो कौम
शहीद पैदा करने की समस्या रखती है ।
उस कौम को
किसी भी समय की सरकार
दबा नही सकती ।

जात-पात और सिक्ख धर्म

- ज्ञानी महिंदर सिंघ

मनुवादी कानूनों के शिकंजे में जकडी हुई भारत की दलित श्रेणी जब पशुओं से भी बदतर जीवन गुजार रही थी । बुद्ध धर्म के पश्चात उनको अपने अंधकाररूपी जीवन मार्ग में कोई आशा की किरण नजर नहीं आ रही थी । बौद्ध धर्म को मनुवाद के ग्रहणने बिलकुल ग्रस लिया था । ऐसे अंधकार युग में भाई गुरदास जी के कथनानुसार गुरू नानक देवजी रूपी सूर्य प्रगट हुए । जिनके प्रकाश ने असूरी शक्तियों को छाई माई कर दिया ।

गुरूनानक देवजी ने निधड हो कर भाई लालो के घर, कोधरे की रोटी खाई, पर मलक भागो की हराम की कमाई करनेवाले पर दूशन लगाये, दलित श्रेणीयों जिसकी स्वर्ण हिंदु परछाई को भी पाप समझते थे । गुरूनानक देवजी उनके पक्ष में आवाज ही नही उठाई बल्कि अपने आपको उनका संगी साथी कहा :-

उन्होंने कहा कि भगवान के दरबार में मनुष्यी आत्मा का जीवों के साथ वासता पढता है तो वहां ऊंची जाती का जोर नही चलता :-

अगै जति न जोर है । अगै जीउ नवे ।। (श्री गु. ग्रं. सा. पा. ४९९)

गुरूजी ने और स्पष्ट शब्दों में कहा कि सभी जीवों का आधार वो प्रमात्मा है वहां जात का हंकार बिलकुल व्यर्थ है ।

गुरूनानक देवजी की इस इन्कलाबी विचारधारा को गुरू अमरदासजीने और आगे चलाई । उन्होंने हुकम किया सिंघ हमारे दर्शन तभी कर सकता है, जब वे वो एक पंगत में बैठकर लंगर प्राप्त कर आयेगा । इस तरह गुरूजी ने जाति अभिमानियों का हंकार चकना चूर कर दिया । और गुरूनानक देवजी की संगत में बराबरी की विचारधारा पंगत के रूप में आगे चल पढी :-

इस विचारधारा को गुरू अरजन देव जी ने और निखारा । उन्होंने दलित श्रेणीयां में जन्म लिये । भगत रविदास जी, भगत नामदेवजी, भगत सैनजी, तथा भगत कबीर जी की बाणी श्री गुरू ग्रंथ साहिबजी में सन्मानसहित अंकित की । गुरूजीने हरिमंदिर साहिबजी (स्वर्ण मंदिर) के चार दरवाजे चारो

वर्णों के लिये खुले कर दिये । हर जाती का मनुष्य बिना किसी हिचक के अमृत सरोवर में बेझिझक स्नान कर सकता है । गुरू ग्रंथ साहिबजी की बाणी में से निराधार को इस तरह का संदेश मिलता है :-

जौ तू ब्राह्मण ब्रहमणी जाइआ ।
तउ आन बाट काहे नही आइआ ।।२।।
तउ कत ब्रहमण हम कत सूद ।
हम कत लहू तुम कत दूध ।।३।। (श्री गु.ग्रं.सा.पन्ना ३२४)

गुरू गोबिंदसिंघजी ने जात पात की विचारधारा विरुद्ध इनकलाबी ऐलान कर के मनुवाद के मुंह पर एक ऐसा घूसा मारा जिस का तेडा मुंह कभी सीधा नही हो सका - गुरूजी का ऐलान था -

चहूँ वर्णा को एक बनाऊँ । तबी गोबिंदसिंघ नाम सदाऊँ ।।

दसम पातिशाह (गुरू गोबिंदसिंघजी) ने वैसाखी सन १६९९ के दिन इस ऐलान नामे को अमली रूप दिया । उन्होंने स्वर्ण जातिआं एवं शूद्र को एक ही वाटे में अमृत की दिक्षा दी और सरब सांझीवाल का भाई चारा खालसा पंथ कायम किया । सभी को सिंघ और सरदार पदवी प्रदान की । सभी खालसे का जन्म नगर श्री आनंदपुरसाहिब हुआ । खालसापंथ का पिता दशम पातिशाह और माता साहिब कौर जी को बनाया । सभी को हृदो में बांधकर अमृत के दाते ने अमृत का सैलाब बहा दिया और मनुष्यों को सिखिया दी **"मानस की जात सबै ऐकै ही पहिचान बो ।।"**

अकाल उसतति पना १९

गुरूजी ने शूद्रों को अपने गले से लगाया

दलित श्रेणी वालो को सरदार बनाया और उन्हें जरनैल और जथेदार की पदवी दी जिसके फल स्वरूप भाई उदैसिंघजी की अधिपत्य के नीचे राजा केसरी चंद का सीस बर्छे की नौक पर टांग कर गुरूजी के दरबार में पेश किया । यही पर बस नही चमकौर साहिब के गढी में बाबा संगतसिंघ को अपनी पोशाख पहनाकर कलगी प्रदान की नतीजा ये निकला कि पंजाब के दबे कुचले लोग सिंघ सजकर अनखीला जीवन जीने लगे और हर दुख सुख में खालसापंथ के बराबर के सांझीदार बन गये ।

मेरा पका विश्वास है कि -

जे कर भारतभर के दलितलोग सिख धर्म को स्वीकार कर ले अपने को पक्के अमृतधारी तैयार बर तैयार सिंघ सज जाये तो उनके जीवन का अनखिला दौर आरंभ हो सकता है और वो मनुवादी चक्कर में से निकलकर मुक्ती का मार्ग पा सकते हैं ।

सिख कौम के आगुओं से मेरी अपील है कि वो इस पक्ष की तरफ ध्यान दें । इस तरह सिख विचार धारा का बडा भारी फैलाव हो सकता है ।

- अनुवादक
तारासिंघ गोरोवाडा.
गुरुमति ज्ञान के सौजन्य से

शक्ति मिल जाये तो इन्सान बदल जाता है ।
भक्ति मिल जाये तो भगवान बदल जाता है ।
भाग्य दुर्भाग्य की बात अलग है
वर्ना
प्यार मिल जाये तो, शैतान बदल जाता है ।
इसी लिये तो कहता हूं -
प्यार जिंदगी का शिखर है, चढ कर तो जरा देखलो ।
क्या रंग लाती है जिंदगी, प्यार करके तो जरा देखलो ।।
- तारासिंघ गोरोवाडा.

परोपकारी सिक्ख विरसे की लासानी दास्तां : बडा घल्लूघारा

- प्रो. सुरिंदर कौर
अंधेरी, मुंबई.

सिक्ख इतिहास का सबसे घातक व प्रचंड युद्ध, जो 'बडा घल्लूधारा' के नाम से विख्यात है, फरवरी, २०१२ में इसके ढाई सौ वर्ष पूरे हो गए हैं। युद्ध लडना हारने या जीतने का ही परिणाम होते हैं, परंतु इतिहास में कुछ युद्ध हार-जीत से परे अस्तित्व के लिए भी लडे जाते रहे हैं। कुछ युद्ध परमार्थ के लिए लडे गए हैं और कभी-कभी युद्ध थोपे भी गए हैं। ऐसे थोपे हुए युद्ध हमेशा ही किसी न किसी अहंकारी व्यक्ति की अंधी नीतियों और दिशाहीन महत्त्वाकांक्षा का परिणाम होते हैं। संसार के इतिहास में ऐसे अहंकारियों की कमी नहीं है। जहां इतिहास इनकी 'हउमै' द्वारा उपजी क्रूरता, वहशीपन और अत्याचार का साक्षी है वहीं निष्पक्ष होकर भविष्य को उनके सर्वनाश का वृत्तांत भी सुना रहा है। भाई साहिब **भाई गुरदास जी सिक्ख साहित्य के मूर्धन्य विद्वान और श्रेष्ठ इतिहासकारों में से एक हैं।** उन्होंने बडी ही सरल शैली में संसार के इन अहंकारियों के सैकडों वर्षों के इतिहास को कुछ शब्दों में समेटकर इस प्रकार प्रस्तुत किया है :

लख दुरयोधन कंस लख लख दैत लडंदे ।
लख रावण कुंभकरण लख लख राकस मंदे ।
परसराम लख सहंसबाहु करि खुदी खहंदे ।
हरनाकस बहु करणाकसा नरसिंघ बुकंदे ।
लख करोध विरोध लख लख वैरु करंदे ।
गुरु सिख पोहि न सकई साधसंगि मिलंदे ।।

(वार ३८.३)

जहां भाई साहिब इन अहंकारी योद्धाओं का वर्णन करते हैं वहीं वे यह भी बता रहे हैं कि सच्चा गुरसिक्ख सदा सतिसंग के सानिध्य में रहता है इसलिए उसे अहंकार छू भी नहीं सकता। वह व्यर्थ में युद्ध नहीं करता, परंतु एक सच्चा गुरसिक्ख कायर भी नहीं है। वह अहंकारवश होकर किसी

पर आक्रमण नहीं करता, पर किसी अहंकारी के आक्रमण पर चुप भी नहीं बैठता, मुंहतोड जवाब देता है। अन्याय का विरोध करने की सामर्थ्य सिक्खों को जन्मघुट्टी में मिलती है। वे स्वयं चाहे कितने भी कठोर हालातों में रहें पर वक्त पडने पर बडे से बडे जालिम से टकराने से भी नहीं डरते, कभी युद्ध-भूमि में जाकर पीठ नहीं दिखाते। सिक्खों का जीवन फलसफा ही यह है :

लूणु साहिब दा खाइ कै रण अंदरि लडि मरै सु जापै ।
सिर वढै हथीआरु करि वरीआमा वरिआमु सिआपै ।

(वार ३०.१४)

सिक्ख देश-धर्म पर अपना सब कुछ कुर्बान कर देते हैं। यह तो सिक्खों के लिए कहावत ही बन गई है कि **"वे तेगों की छांव तले पलते हैं।"** पंजाब की धरती हर पचास-सौ साल में युद्ध के मैदान में बदलती रही है। देश की सरहद होने के कारण पंजाब और पंजाब के सिक्ख हर विदेशी हमलावर के सामने सीना तानकर उसे रोकने के लिए तत्पर रहे हैं। पूरे देश को सुरक्षित रखने के लिए हर बार पंजाब की धरती लहू से सराबोर हुई है।

इसी परोपकारी भावना का निर्वाह करते हु सिक्खों ने अपने इतिहास के सबसे घातक युद्ध 'बडे घल्लूधारे' का सामना किया, जो एक अहंकारी, लुटेरे, हमलावर अहमद शाह अब्दाली के कारण सिक्खों पर थोपा गया था।

जहां यह युद्ध सिक्ख इतिहास का सबसे बडा खूनी साका है वहीं यह युद्ध सिक्खों के अटूट और बेखौफ हौसलों का साक्षी बनकर देश को स्वाभिमान का नया पाठ भी पढा रहा है। यह साका दुनिया के इतिहास को और विशेषत: भारत के इतिहास को यह बता रहा है कि किस तरह इस देश की इज्जत-आबरू की रक्षा का मूल्य सिक्ख कौम ने अपने लहू का सागर बहा कर चुकाया था। यह वो दिन था जिस दिन, एक ही दिन में लगभग ३०-३५ हजारे सिक्खों (उस समय की मौजूदा आधी सिक्ख कौम) को अब्दाली ने एक ही दिन में शहीद कर दिया था। इनका कसूर क्या था, भारत की असहाय अबलाओं की आबरू की रक्षा करना? सिक्ख कौम अपने इस दायित्व को कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी निभाती रही है। ऐसे महान गुरसिक्खों जिन्होंने सतिगुरु के प्रेम में अपने जीवन तक हो न्यौछावर कर दिया, उनके लिए श्री गुरु अरजन देव जी कहते हैं :

आपि मुकतु मुकतु करै संसारु ॥
नानक तिसु जन कउ सदा नमसकारु ॥

(श्री गु.ग्रं.सा.पन्ना २९५)

ऐसे महान गुरसिक्खों के अथक परिश्रम को कौम में सदा जीवित रखने के लिए, आने वाली पीढियों के लिए एक पथ-प्रदर्शक, प्रकाश-स्तंभ बनाने के लिए पंथ ने रोजाना की अरदास (प्रार्थना) में इन शहादतों को विशेष स्थान दिया है। गुरु साहिबान, पांच प्यारों, चार साहिबजादों को याद करने के बाद हम जितनी भी शहादतों का स्मरण करते हैं वे सभी शहादतें उन ८०-८५ वर्षों में हुई हैं जिस समय अलगीधर पिता पंथ को सदा के लिए दैहिक रूप से छोड चले गए थे और इस समय से लेकर तब तक महाराजा रणजीत सिंघ ने राज्य स्थापित नहीं किया था। उस काल में पंथ ने जितना आक्रमणकारियों का सामना किया, जितने उतार-चढाव देखे और जितना लहू बहाया उसका सिक्ख इतिहास में अन्य उदाहरण मिल पाना कठिन है। इतिहास इस बात का भी साक्षी है कि गुरु साहिबान के बाद से लेकर आज तक के समय में सबर और धैर्य के साथ जिन शिखरों को इन महान गुरसिक्खों ने छुआ, जिन कठिन परिस्थितियों में ये मृत्यू पर विजय पाने वाले अडोल रहे, उसकी दूसरी मिसाल मिल पाना असंभव है। इस दौर में कई-कई बार सिक्ख धर्म को गैरकानूनी घोषित कर दिया गया, कई बार सिक्खों का सामूहिक नरसंहार हुआ, यहां तक कि सिक्खों के सिरों के दाम तक लगा दिए गए। देश के हर गली-कूचे पर गश्ती फौजें सरेआम सिक्खों का शिकार करती फिरतीं। बडा घल्लूघारा ऐसे ही विकट काल की सबसे दुखदायी घटना है। इस घटना को समझने के लिए हमें समसामयिक हालातों को समझना होगा।

उस समय देश के केंद्र दिल्ली में मुगलों का राज्य था, पर औरंगजेब की मृत्यु के बाद मुगल राज्य अपनी साख गवां बैठा और नाममात्र का ही केंद्रीय राज्य रह गया था। वास्तव में भारत के मध्यकालीन समय में एक बडे साम्राज्य के स्थान पर छोटे-छोटे राज्यों का ही बोलबाला रहा है और इनमें से अनेक तो अपनी सारी शक्ति आपस में लडने-भिडने में ही नष्ट कर देते थे। स्वार्थ, ईर्ष्या और अहंकार से भरे ये राजा, महाराजा व रियासतदानों में अपने घमंड के प्रकटन को लेकर अक्सर खींचतान चलती रहती और वे नित्य ही अपने तथाकथित राज्यों की सीमाओं को बढाने के लिए युद्ध में

उलझे रहते। कुछ बेचारे तो अपने राज्यों के अस्तित्व को बचाने के लिए विवशता के कारण ही इसमें फंस गए थे; कइयां ने अपनी राज्यसत्ता की भूख पर धर्म का आवरण भी चढा लिया था। कुल मिलाकर हम इतना कह सकते हैं कि सारे देश में अराजकता थी, अस्थिरता का वातावरण बना हुआ था, साथ ही उत्तर-पश्चिम की ओर से होने वाले आक्रमणों ने भी बहुत हद तक किसी भी राज्य को स्थिर नहीं रहने दिया था। इन सभी कारणों की चहुंतरफी मार सिक्खों पर पडी। वैसे अभी गुरु साहिबान के समय तक किसी ने भी अपना राज्य स्थापित नहीं किया था, परंतु सिक्खों की धन-संपत्ति व रूप-यौवन ने कइयों का ध्यान अपनी ओर खींचा। खालसा के सृजन के बाद श्री अनंदपुर साहिब को केंद्र बनाकर की गई सिक्खों की सैनिक कार्रवाइयां पहले ही पहाडी राजाओं से लेकर मुगल दरबार तक की नींद हराम कर चुकी थीं।

गुरु साहिबान के बाद बाबा बंदा सिंघ बहादुर ने पहली बार सिक्ख राज्य स्थापित किया, परंतु उनकी अनुपम शहादत के बाद पंजाब में जुल्मों की फिर से ऐसी आंधी आई जिसका सामना यहूदियों के बाद दुनिया के इतिहास में केवल सिक्खों ने ही किया है। इस दौरान कई-कई बार सिक्ख धर्म को गैरकानूनी करार दे दिया गया। सरकारी अदेश जारी हो गए कि जहां-जहां कोई केशाधारी सिक्ख नजर आता है बंदी बना लिया जाए; सिक्खों के घर-बार, खेत व अन्य संपत्ति जब्त कर ली जाए। यह बडी मुश्किल का दौर था। अठारहवीं सदी के आरंभिक ४०-५० साल इसी हालात में गुजरे थे। सिक्खों ने अपने स्वाभिमान की रक्षा के लिए घर-बार छोड दिए, जंगलों, पर्वतों व मरुस्थलों में शरण ली। एक ओर सिक्ख जंगलों में किसी तरह दिन गुजार रहे थे तो दूसरी ओर सिक्खों के सिरों के दाम लगने लगे। जमीन-जायदाद जब्त होने के कारण मजबूरन सिक्खों को अपने परिवारों को भी अपने साथ ही रखना पडा।

जरा सोचने की कोशिश करे कि किस तरह उन सिंघों, सिंघणियों, बच्चों, बुजुर्गों ने खुले आसमान तले पल-पल पीछा करती मौत का सामना करते हुए दिन काटे होंगे। मेहनतकश, गरीब व कठोर रोजगार वाले सिंघों-सिंघणियों ने तो जैसे-तैसे अपने आप को हालात के अनुसार ढाल लिया,

पर ऊंचे घराने के सिक्खों के लिए यह बडे संकट का दौर था । जिनके अपने कारोबार थे, दुकानें थी, नौकर-चाकर थे, जिन सिंघणियों ने अपनी कोठियों के बाहर की गलियां भी कभी अकेले पार नहीं की थीं, आज वे सब अपने धर्म की रक्षा के लिए इन बीआबान कंटीले जंगलों में रहने के लिए विवश थे । सिर पर छत के स्थान पर आग-पाला बरसाता खुला आकाश था; न जमीन, न कोई बिछौना, न ठंडी ठिठुरती हवाओं को रोकने के लिए कोई दीवार या कनात थी; न कोई रोजी-रोटी का साधन, न अपने भाई-बंधुओं के कुशल-क्षेम का कोई समाचार, न दो वक्त की रोटी, न तन पर कोई ढंग का कपडा और इस पर यदि कोई घायल था बीमार हो जाए तो कोई उपचार नहीं । यह अति कठिन समय था । दूसरी ओर गश्ती फौजें चप्पे-चप्पे पर खालसे का सुराग ढूंढती फिरतीं । पत्ता-पत्ता सिक्खों का वैरी हो गया था । सिक्खों ने भी अपने आप को छोटे-छोटे दलों में बांट लिया और भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में फैल गए । कइयों ने बीकानेर के मरुस्थलों का रुख किया, कंई शिवालिक के पर्वतीय क्षेत्रों की ओर निकल गए, फिर भी सिक्खों की मुख्य तादाद श्री अमृतसर व लाहौर के मध्य भाग में, काहनूवान (जिला गुरदासपुर) के जंगलों में छिप गई । यह उस समय बडा घना कंटीला इलाका था जिसमें एक आम व्यक्ति दिन के उजाले में भी पैर रखना उचित नहीं समझता था । जहां अच्छे से अच्छा कद्दावर सैनिक भी अंदर जाने से कतराता था, वही काहनूवान के जंगल वर्षों तक सिक्खों की शरणस्थली बने रहे ।

सिक्ख सब कुछ अंकाल पुरख वाहिगुरु की आज्ञा के समक्ष नत्मस्तक होकर सहते रहे परंतु इतने बिकट हालातों में भी उन्होंने बपने कर्तव्यों की अवहेलना नहीं की । स्वयं अत्याचार का शिकार होने के बावजूद अन्य शोषितों की सहायता 'दल खालसा' सदा करता रहा था । इसी तरह नादिर शाह के आक्रमण के समय सिक्खों ने अपने प्राणों की बाजी लगाकर सैकडों अबलाओं को छुडाकर देश की लाज बचायी थी ।

नादिर शाह के बाद अहमदशाह अब्दाली अफगानिस्तान का शासक बना । भारत की धन-संपत्ति व रूप सदा उसे अपनी ओर आकर्षिक करते रहते, जिसे प्राप्त करने के लिए अब्दाली ने सन् १७४८ से लेकर १७६१ ई तक पांच बार इस देश पर आक्रमण किया । पंजाब चूंकि बिलकुल सीमावर्ती

राज्य है और दूसरी ओर धन एवं सौंदर्य से मालामाल भी, इसलिए पंजाब को उसने अपना खास निशाना बनाया ।

सन् १७६० तक मराठे लगभग सारे देश पर हावी हो चुके थे, यहां तक कि दिल्ली में मुगल शाह आलम को भी उन्होंने ही तख्त पर बिठाया था । अटक दरिया के उत्तरी छोर तक वे कर वसूला करते थे । बहुत हद तक उन्होंने सीमाओं को सुरक्षित भी करने का प्रयास किया था । सन् १७५० से लेकर १७६० ई तक के दस साल सिक्खों के लिए भी कुछ ठीक-ठाक ही रहे थे । मुगलों की ताकत घटने के साथ ही सिक्खों ने फिर जोर पकडना शुरू कर दिया और धीरे-धीरे नगरों में बसना भी आरंभ कर दिया ।

जैसा कि पहले ही कहा जां चुका है कि देश में आपसी फूट सिर चढकर बोल रही थी । भरतपुर के राजपूत राजा सूरजमल के लिए मराठों को कर देने वाली बात असहनीय हो रही थी । सबसे अधिक विरोध किया रोहिलखंड के शासक नजीब खान ने । यदि मराठे कर वसूल रहे थे तो वे जनता की सुरक्षा का उत्तरदायित्व भी निभा रहे थे, परंतु इस देश में जयचंद जैसे गद्दारों की कमी नहीं है । नजीब खान भी ऐसे ही गद्दारों की कमी नहीं है । नजीब खान भी ऐसे ही गद्दारों में से एक था । उसने मराठों के विरुद्ध चढाई करने के लिए अब्दाली को निमंत्रण भेज दिया । सन् १७६१ में पानीपत के मैदान में अब्दाली को निमंत्रण भेज दिया । सन् १७६१ में पानीपत के मैदान में अब्दाली व मराठों में घमासान युद्ध हुआ । इस युद्ध में मराठों को पराजय का सामना करना पडा और उनका सेनापति सदाशिव राव भाऊ मारा गया । यह अब्दाली का पांचवा हमला था जो केवल मराठों के विरुद्ध था । सिक्खों का इस युद्ध से कोई सीधा संबंध नहीं था । मराठों की हार के बाद तीन चार महीने यहीं रहकर अब्दाली ने लूटमार की और आगे उत्तर प्रदेश तक के क्षेत्रों को भी लूटा व आतंकित किया । २० मार्च, १७६१ ई को अब्दाली ने दिल्ली में पडाव डाला । इस बार अब्दाली के खेमे में हजारों बंदी थे, जिनमें २२०० सुंदर अविवाहित व नवविवाहित हिंदू स्त्रियां भी थीं । इतिहास साक्षी है कि इन अबलाओं की करुण पुकार किसी तथाकथित सूरमें ने नहीं सुनी । उस समय बेशक मराठों को पराजय का सामना करना पडा, मगर उन्होंने सिर झुकाने के स्थान पर सिर ऊंचा करके मुकाबला करने का

साहस तो किया । आश्चर्य की बात है कि बाकी सारा देश क्या कर रहा था? उस समय क्यों किसी और ने इन मासूमों की इस करुण पुकार को नहीं सुना? सभी अपने आप को बचाने और अब्दाली को खुश करने में लगे थे ।

जब किसी ओर से कोई सहायता नहीं मिली तो १० अप्रैल, १७६१ ई को वैसाखी के अवसर पर हिंदुओं के धार्मिक व सामाजिक नेताओं ने श्री अमृतसर पहुंचकर खालसे की शरण में विनती की । सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालीआ उस समय दल खालसा के सरदार थे । उन्होंने इस विपत्ति को पूर्णत: समझते हुए सहायता करने का निर्णय लिया । अब्दाली की सेना के साथ सीधे टकराव का तो प्रश्न ही नहीं उठता था, इसलिए कुछ चुनिंदा सिंघ सरदारों को साथ लेकर स. जस्सा सिंघ गोईंदवाल के निकट ब्यास नदी के तट पर पहुंच गए । जिस समय अब्दाली की सेना ब्यास पार कर रही थी सिक्खों ने अचानक ही उस पर हल्ला बोल दिया और २२०० युवतियों को छुडा लिया । जत्थेदार साहिब ने इन सभी लडकियों को ससम्मान से उनके घरों तक पहुंचाने का विशेष उपक्रम किया । जिन लडकियों को उनके परिवारों ने स्वीकार नहीं किया उन्होंने सिक्ख दलों में रहकर अपने दिलेर सिक्ख भाइयों की सेवा करने का निर्णय लिया और अमृत-पान कर सिक्ख धर्म को सहर्ष स्वीकार कर लिया ।

बेशक अब्दाली को कोई विशेष आर्थिक हानि नहीं हुई थी फिर भी युवतियों व गुलामों को छुडाया जाना एक तीखा प्रहार था, जिससे उसका मन क्रोधित हो गया । काबुल लौटता हुआ वह अपने गुप्तचर पंजाब में छोड गया । उसने मन ही मन यह निर्णय कर लिया कि अचानक हमला क्या होता है यह मैं सिक्खों को जरूर दिखाऊंगा । इस प्रकार हिंदुओं की बहु-बेटियों की आबरू बचाने का बदला उसने तीस हजार सिक्खों को शहीद करके लिया ।

जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है कि अपनों के साथ गद्दारी करना भी इस देश के कई आदमियों के खून में फैल चुका था । जंडिआला (जिला श्री अमृतसर) का महंत आकुल दास अपनी ही कौम की बहू-बेटियों की रक्षा करनेवाले सिक्खों के खिलाफ अब्दाली के लिए गुप्तचरी करता रहा । उसी साल २७ अक्तूबर, १७६१ ई के बंदीछोड दिवस (दीवाली) पर खालसे ने अपने विरोधियों के बारे में ठोस रणनीति बनाई; साथ ही महंत आकुल दास

को भी दरबार खालसा में उपस्थित होने का आदेश दिया, परंतु उसने पेश होने के स्थान पर अब्दाली को सिक्खों पर आक्रमण करने का न्यौता भेज दिया जो स्वयं ऐसे ही अवसर की खोज में था । अबदाली ने बुलावे पर अमल किया और हिंदोस्तान पर अपना छठा आक्रमण कर दिया जो केवल सिक्खों के विरुद्ध था ।

सिक्खों को भी इसकी भनक लग चुकी थी, इसलिए सिक्खों ने पहले अपने परिवारों को सतलुज के पार ले जाकर सुरक्षित करने का निर्णय लिया, क्योंकि दल में बडी भारी तादात में सिंघणियां, बच्चे व बुजुर्ग मौजूद थे । ३ फरवरी, १७६२ ई को अब्दाली की सेना लाहौर पहुंच गई । सिक्खों ने हालात के अनुसार यह अनुमान लगाया कि वह अगले पांच-सात दिनों तक ही यहां पहुंच सकेगा । यही अनुमान उनके लिए सबसे घातक सिद्ध हुआ । यह बात वाकई हैरान कर देने वाली है कि केवल दो दिनों में अब्दाली और उसकी सेना ने लाहौर से मलेरकोटला तक का सफर बडी फुर्ती से तय किया और वे ६ फरवरी, १७६२ ई के दिन सतलुज के तट पर सिक्खों पर टूट पडे । अब सिक्खों की भी समझ में आ गया कि शत्रु ने आक्रमण कर दिया है । सभी युद्ध के लिए डटकर खडे हो गए । यह हमला मुंह-अंधेरे सुबह ४.३०-५.०० बजे के आस-पास अचानक हुआ था, इसलिए सिक्खों को कोई योजना बनाने का समय ही नहीं मिला । किसी का अभी स्नान बाकी था, कोई पाठ कर रहा था, कोई घोडों को चारा-पानी डाल रहा था । सारे काम बीच में ही छोड दिए गए । बेशक हमला अचानक हुआ था, इसलिए सिक्खों को कोई योजना बनाने का समय ही नहीं मिला । फिर भी सिक्खों ने मैदान छोडने के स्थान पर डटकर मुकाबला करने की ठानी । परिवार भी साथ होने के कारण पहले ही हमले में सैकडों सिक्ख शहीद हो गए । किसी तरह मुखी सिंघों ने सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालीआ के साथ मिलकर एक अस्थायी योजना बनाई और दल के आस-पास फौजी सिक्खों की दीवार-सी बना ली । बीच में स्त्रियों, बच्चों व बुजुर्गों को रखकर बचाने का यत्न किया गया; साथ ही अगली पंक्तियों में लडते हुए बरनाला नगर की ओर बढना आरंभ किया ।

आगे-आगे सरदार शाम सिंघ थे और अहमदगढ वाली दिशा में सरदार जस्सा सिंघ स्वयं थे । मलेरकोटला की तरफ के सिक्ख सरदार

चढत सिंघ की कमान में लड रहे थे । अब सिंघों ने भी बडी वीरता के जौहर दिखाने शुरू कर दिए जिससे यह घमसान दोतरफा हो गया । हर ओर एक भगदड-सी मच गई । अब्दाली के सेनापति हर ओर से प्रयास कर रहे थे कि वे खालसे की पहली कतार को तोडकर बीच में जाकर न लडनेवाले सिक्खों को मार सकें, जिनमें जैन खान सबसे आगे था । सिक्ख जान की बाजी लगाकर लड रहे थे, परंतु फिर भी पीछे हटते हुए उनका बहुत अधिक जानी नुकसान हो रहा था । सिक्खों ने अपने गुरु साहिबान को याद किया । गुरबाणी की पंक्तियों को अपनी रसना से उच्चारण करते हुए वे 'बोले सो निहाल, सति श्री अकाल' के जैकारे बुलंद करते रहे । उस समय केवल एक चढदी कला की भावना ही काम कर रही थी । सिंघ सरदार बार-बार कलगीधर पिता के यह शब्द अपनी हिम्मत बनाए रखने के लिए गा रहे थे :

न डरों अरि सो जब जाइ लरों निसचै करि अपनीजीत करों ।।

दो मील तक सिक्ख बहुत जोश से लडते हुए शत्रुओं के टुकडे-टुकडे करते हुए राह बनाते रहे । थोडे समय में हर ओर लहू ही लहू दिखाई दे रहा था । अब्दाली की सेना का भी बहुत जानी नुकसान हुआ और सिक्खों का भी । सिक्ख योद्धाओं की गिनती से शत्रु योद्धाओं की तादात बहुत ज्यादा थी । लडने के अलावा और कोई रास्ता अब्दाली ने सिक्खों के लिए बाकी नहीं छोडा था । सिंघों ने भी घिरकर कत्ल हो जाने से झूझ कर शहीद होना बेहतर समझा । लडने वालों में अब १३-१४ साल के बच्चे भी सम्मिलित होने लगे । कई सिंघणियों ने भी आगे बढकर वीरता के जौहर दिखाए तथा कई शत्रुओं को मौत के घाट उतार दिया । कुछ सिक्खों ने पानी पिलाने, घायलों को संभालने व भारी सामान उठाकर साथ चलने की सेवा संभाली । घायलों की मरहम-पट्टी की मुख्य जिम्मेदारी सिंघणियों ने संभाली जिससे अधिक से अधिक सिक्ख युद्ध के लिए तत्पर हो सकें । कुछ सिक्खों ने एक खास सेवा संभाली जो थी मारे गए अफगानियों के शस्त्र जमा करके खालसा फौज को देना, जिससे युद्ध जारी रह सके, क्योंकि सिक्खों के पास शस्त्र और गोला-बारूद लगभग समाप्त हो चुके थे ।

सिक्खों के जोश और युद्ध के पैंतरे देखकर अब्दाली हक्का-बक्का रहा गया । अपने गुप्तचरों से उसने सिक्खों के बारे में बहुत कुछ सुन रखा

था, पर यह पहला अवसर था जब वह सिक्खों से आमने-सामने लड रहा था । अब अपने अहिलकारों से सिक्खों की प्रशंसा सुनते ही वह जलकर कोयला हो गया और उसने अंतर्मन यह निर्णय कर लिया कि वह सिक्खों का समूल नाश करके ही दम लेगा । उसने अपने सिपहसालार वली खान, भीखन खान व जैन खान को और अधिक शक्ति (सेना) लेकर लडने का आदेश दिया । उन्होंने तीनों ओर से बडे भारी दसते को लेकर एक साथ हमला बोल दिया । सिक्खों की तादाद कम होने के कारण वे इस हमले को सहार न सके और हजारों की गिनती में शहीद हो गए । इस प्रकार से सिक्ख योद्धाओं द्वारा बनाई गई रक्षा-पंक्ति भी टूट गई और अंदरूनी दल को बहुत अधिक जानी नुकसान पहुंचा । अब्दाली ने मन बना लिया था कि दल के ऐन बीच पहुंच कर ऐसा करारा प्रहार किया जाए जिससे सिक्ख दोबारा उठ न सकें ।

सिंघ सरदारों ने अब होशियारी और हिम्मत से काम लेते हुए अपने आप को संभाला । वे अब्दाली के नापाक इरादों को रोकने के लिए डट गए । फिर एक बार दोनों ओर से तेज घमसान मच गई । सारी धरती लहू से भीग गई थी । युद्ध का मैदान हर पल एक नया ही रूप धारण करता जा रहा था । इस प्रकार से लडते हुए रात होने तक सिक्ख लगभग बीस मील का सफर तय कर चुके थे । दूसरी तरफ अब्दाली के सिपाही, जिन्होंने पहले लगातार १५० मील की यात्रा की थी और अब पिछले दस घंटों से लड रहे थे, थक कर चूर हो चुके थे । अंत में सूरज ढलते ही दोनों पक्षों की ओर से युद्ध बंद हो गया और दोनों ही सतलुज के जल से अपनी प्यास बुझाने लगे ।

इतिहास के अनुसार इस युद्ध में लगभग तीस हजार सिंघ, सिंघणियां व बच्चे शहीद हो गए, उस समय की लगभग आधी सिक्ख कौम । एक दिन में खालसे का इससे अधिक जानी नुकसान पहले कभी नहीं हुआ था । एक तरफ अब्दाली सिक्खों का नामोनिशान न मिटा सकने के कारण बौखलाया हुआ था, क्योंकि सिक्ख अभी जीवित थे, जिन्हें वह अपनी आंखों से देख चुका था । इस चिढ को उतारने के लिए लौटता हुआ वह श्री हरिमंदर साहिब को पूरी तर उध्वस्त कर गया और शहीद सिक्खों के सिरों को गाडियों में भरकर लाहौर ले गया तथा उनको मुख्य दरवाजों में चिनवा दिया, जिससे

आम लोगों के समक्ष वो अपनी शक्ति का प्रदर्शन कर सके । दूसरी ओर इतने भारी नुकसान के बाद भी खालसे का यह हाल था :

सिक्ख पिछले ५०-६० वर्षों से ऐसे हालातों का सामना क रहे थे, इसलिए वे अडिग रहे, टूटे नहीं । वे इसे खालसे के लिए अकाल पुरख वाहिगुरु का एक और खेल, एक और परीक्षा समझकर सह गए । प्रसन्नचित्त होकर ईश्वर की आज्ञा का पालन सिक्खी जज्बे का एक अभिन्न अंग है । हर खुशी, हर दुख में सिक्ख अरदास करके परमात्मा का धन्यवाद ही करता है ।

इस जज्बे का सबूत इस बात से मिल जाता है कि सिक्ख बहुत जल्दी उठ खडे हुए । प्राचीन पंथ प्रकाश के अनुसार तीन महिने बाद खालसे ने फिर जैन खान पर हमला किया । अब्दाली की अनुपस्थिती में वो इसे संभाल न सका और अमन-चैन बनाए रखने के लिए उसने मुआवजे के रूप में ५०,००० रुपए सिक्खों को दिए, यह बात और है कि बाहरी शह मिलने से वह फिर अपने पुराने रवैये पर आ गया । इस घल्लूघारे के नौ महीने बाद ही सिक्ख फिर अपने ठिकानों पर आ गए । उसी साल बंदीछोड दिवस (दीवाली) पर श्री हरिमंदर साहिब में बडा भारी समागम हुआ । जो सिक्ख घल्लूघारे से बच गए थे वे दोबारा प्रचार-कार्य में सरगरम होने लगे । कई गृहस्थी सिक्खों ने भी अब जंगजूझ सिक्खों के साथ रहना शुरू कर दिया जिससे खालसे की शक्ति और बढ सके । पूरे देश से सैकडों नौजवान बच्चों ने श्रीअमृतसर आकर अमृत-पान किया और पंथ की मुख्य धारा से जुड गए । सिक्खों ने अमृत सरोवर की खुदाई करवाई और श्री हरिमंदर साहिब का पुनर्निर्माण करवाया । सिक्खों में अब्दाली के विरुद्ध गुस्सा बरकरार रहा जिसे दल खालसा ने सन् १७६४ में बाबा दीप सिंघ जी के नेतृत्व में लडे गए युद्ध में जहान खान को मार उतारा । इस युद्ध में बाबा दीप सिंघ जी स्वयं भी शहीद हो गए । यह शत्रुओं के लिए स्पष्ट चुनौती थी कि "तुम मारकर भी असफल हो और हम मरकर भी सफल है ।" इस देश में ऐसे प्रसंग बार-बार सिक्खों के साथ होते रहे हैं । सन् १९८४ को कोई भुला नहीं सकता । गुरदेव पिता की कृपा द्वारा हर बार सिक्खों ने अडोल रहकर वही जवाब दिया जो सन् १७६२ में अब्दाली को दिया था :

सिंघां कदे झुकणा नहीं । सिंघां कदे मुकणा नहीं ।

सिंघां नू झुकाउण वाला, सिंघां नू मुकाउण वाला,
खिआल इक जुनून है । कोई जुलम, कोई सितम,
सानूं झुका सकदा नहीं, सानूं मिटा सकदा नहीं,
किओंकि हाले तां साडीआं रगां विच, कलगीधर दा खून है ।

जहां इस घल्लूघारे ने अत्याचार व अत्याचारी की अति की नई ऊंचाइयों को प्रकट किया वहीं इसने सिक्खों की सहन-शक्ति और गुरु-चरणों पर सब कुछ समर्पित कर देने वाली भावना के लिए एक भयानक कसौटी प्रस्तुत की जिसमें तप कर सिक्ख कंचन की भांति शुद्ध, निरोल और चमकते हुए बाहर आए, पंथ की छवि और निखर गई । जहां इस घल्लूघारे ने अब्दाली जैसे अहंकारी को सिक्खी सिदक की चट्टान से टकराने का मजा चखाया वहीं यह आने वाले समय के लिए भी एक चेतावनी थी । एक बात अवश्य है कि इस घल्लूघारे ने सिक्खों को ऐसे विकट व कठोर समय में एकजुट होने का अवसर दे दिया जिसने ऐसा कमाल का इतिहास बनाया । यह युद्ध सिक्ख कौम के लिए भी एक प्रकाश-स्तंभ है जो हमें न केवल भविष्य में भी एकजुट होकर जूझना सिखा रहा है वरन् सुचेत रहने का भी संदेश दे रहा है । महान हैं वे गुरसिक्ख जिन्होंने गुरु के भरोसे न केवल अत्याचारियों के दांत खट्टे किए वरन् अपने बहुमूल्य प्राणों की आहुति देकर सच्चे प्रेम का प्रमाण भी दिया; साथ ही अपनी सूझबूझ से कौम को समूल नाश से भी बचा लिया । धन्य है वो गुरु जिसने चिडियों को बाज से लडवाकर यह चमत्कार कर दिखाया । धन्य है गुरु की बाणी जिसने सिक्खों के तन, मन और आत्मा को फौलाद बना दिया । जहां इस घल्लूघारे में अब्दाली ने कौम को समाप्त कर देने की योजना बनाई थी वहीं गुरु के मरजीवडे (मरकर भी जिंदा रहने वाले) लालों को सिक्खी के अमिट होने का प्रतीक बना लिया ।

- गुरुमति ज्ञान के सौजन्य से

शहीद बंदासिंघ बहादर के समय के हालात

- ले. स. बचितरसिंघ
स. बहादरसिंघ

धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक और भौगोलिक हालात से संबंधित कई तत्त्व ऐसे होते हैं जो लोगोंको प्रभावित करते हैं ।

इन अलग अलग ततोको सरकार की कुछ नीतियां भी शामिल हो सकती हैं ।

सिख इतिहास में बंदासिंघ बहादरके समय राजनीतिक, धार्मिक और सामाजिक हालात को खास माना जा सकता है । सिख राज का जरनैल बाबा बंदासिंघ एक ऐसा योद्धा हो गया है । जिसने इतिहास में एक नयी परंपरा कायम की है । श्री गुरूगोबिंद सिंघ जी के १७०८ ई.वी. में प्रभु ज्योति में विलीन होने के बाद बाबा बंदासिंघ बहादर ने सिख पंथ की बागडोर संभाली और इस कार्य को अपनी शहादत देकर पूरा किया ।

इस समय उत्तर भारत में मुगल समराज्य पूरी तरह स्थापित हो चुका था । तथा ताकतवार बन चुका था । बाबा बंदासिंघ बहादर को १७१६ ई.वी. में शहीद किया गया । चाहे बंदासिंघ बहादर की अगवाई में सिख राज ज्यादा समय न रहा पर थोडे समय के राज नें भी भविष्य में सिख राज के मार्ग खोल दिये थे ।

बाबा बंदासिंघ बहादर ने कई लडाईयां लडी तथा विजय प्राप्त की । अत्याचारी हाकमों को खत्म करके राज वहां के निवासी लोगों के हाथ दे दिया । हर जगह विजय के बाद लोगों को मानवता का संदेश दिया :-

मुगल राज समय जागीरदारी की प्रथा का जोर था । गांव के मालिक बढे बढे जमीदार थे । खेती करनेवाले किसानों का जमीन पर कोई अधिकार नही था । वे किसान जमीदारों की कृपा पर ही निरभर थे । जमीदार अपनी मनमानी से किसानो से लगान वसूल करते थे । जमीनदार ही उस इलाके के अधिकारी होते थे जो किसानों पर बडा जुलम करते थे । बाबा बंदासिंघ ने इन जमीदारों का प्रबंध खत्म कर दिया । इतिहास गवाह है । बाबा बंदासिंघ

बहादर ने जितनी भी लडाईयां जीती थी वो इलाका वहां की पंचाईत को सपूर्द कर दिया । जमीन की मालकी किसानों को दे दी और सीधा नजराना इन्ही से प्राप्त किया । इसी ढंग को बाद में सिख मिसलो ने अपनाया और महाराजा रणजीतसिंघ ने हमेशा के लिये इसे पक्का कर दिया । पंजाब के किसानों की खुशहाली का इस नीति में बाबा बंदासिंघ बहादर का बडा योगदान था । जिस समय दुनियाभर का किसान जागीरदारी के जुलम में जकडा हुआ था । उस समय पंजाब का किसान अपनी मालकी के अधिकार प्राप्त कर रहा था । सबसे पहिला ऐलान बंदासिंघ बहादर का "खालसा राज का"

इसी नीति के साथ अेक और बात जुडी हुई है । बाबा बंदासिंघ बहादर ने किसानों को कहा कि अब आप अपने जमीदार मालको मार धाड कर बाहर निकाल दो । तब सारे किसान मतिमंद हो गये । वे कहने लगे कि हम निरबल है और जमीदार ताकतवर हैं । जवाब में बंदासिंघ बहादर ने कहा कि तुम हजारों की गिनती में होते हुए भी सैकडों की गिनती में होने वाले जमीदारों से घबराते हो । याद रखो मैं तुम्हें तोपो से उडा दुंगा । इस प्रकार बाबा बंदासिंघ ने मेहनत मजूरी करनेवाले किसानो को अपने अधिकार प्राप्त करने की प्रेरणा दी ।"-

बाबा बंदासिंघ बहादर ने बहुत से इलाको जीत कर अपना सिखराज स्थापित किया । एक समय बंदासिंघ बहादर का प्रभाव उत्तर से सतलुज से दक्षिण में करनाल तक था । पच्छिम में ढिरोजपुर कसूर तक और पूर्व में सहारनपुरसे नजीमा बाद तक वो अपनी धाक जमा चुका था । और पच्छिम में लाहोर के बाजारों को उसके दर्शन हो चुके थे । "बाबा बंदासिंघ बहादर का अपने राज में विचार था कि संघठिक हो जाये तो जालम जागीरदारो के टाकरे से लोगों के दुखो से छुटकारा दिलाया जा सकता है । इसलिये उसने सिख राज में सिख अधिकारियों की नियुक्ति की । उसने भाई बाजसिंघ को सुबेदार नियुक्त किया । भाई अलिसिंघ को उसका नायन नियुक्त किया । भाई फतेहसिंघ को समाने का सुबेदार नियुक्त किया । भाई रामसिंघ को थानेसर का हाकम स्थापित किया । बाबा विनोदसिंघ को पानीपत और करनाल का सुबेदार नियुक्त किया । उसे ये जिमेदारी दी कि वो जनरैली

सडक कि निगरानी रखे । और दिल्ली तरफ से आने वाले दुश्मन को रोक सके । इस तरह साधारन रूप से खालसा राज को चार मुख्य सूबों में बाट दिया । वो ये थे सरहंद, समाना, सोनीपत और करनाल ।''

बाबा बंदासिंघ एक समझदार और सुलजा हुआ जनरैल था । वो हर एक से न्याय करता था । बाबा बंदासिंघ के राज समय सदियो कुचले जानेवाले नीची जाती के लोगो को स्वातंत्र होने का मौका मिला । बाबा बंदासिंघ किसी भी मनुष्य को जबरदस्ती से सिख धर्म में शामिल नही करता था । जिन मुगलों ने हिंदुओं को जबरदस्ती मुसलमान बनाया उन्होनें भी सिख धर्म स्वीकार किया ।

बाबा बंदासिंघ जी ने जागीरदारी और जातीवाद खत्म करने के यत्न किये । उनका मुख्य उद्देश्य राज में से जुलम को खत्म करना था । और आम जनता को उनका हक्क दिलाना था । उन्होंने लोगो में राजजागृती पैदा की और जबर एवं जुलम का टाकरा करने के लिये जनता को संगठित किया ।

किसी भी राज्य के लिये उसका अपना देश, राजधानी, झंडा, फौज, बादशाह और अपना सिक्का होना जरुरी है । सिखों के पास अपना झंडा (केसरी) निशान साहिब बादशाह (बंदासिंघ बहादर) पंजाब का जीता हुआ इलाका तो था ही । फौज भी थी । बाकी की वस्तुएं पूरी करनी थी । सरहंद के फतेह (जीत वाले) दिन लोहगढ को राजधानी बना के सिख राज का समंत जारी किया । जो बंदासिंघ बहादर की शहीदी के साथ ही खत्म हो गया ।'' बाबा बंदासिंघ बहादरने सिख गुरुओं के नाम पर सिक्का जारी किया । सिक्के के एक बाजू ये शब्द लिखे थे ।

''सिका जद बर हर दो आलम तेगि नानक वाहिब असत
फतिह गोबिंदसिंघ शाहि शहान, फजलि सचा साहिब असत''

इसका अर्थ इस प्रकार है ।- गुरू नानक देवजी की बकषिश प्रदान की हुई तेगने दोनो जहानों पर सिका लगाया । शाहों के शाह श्री गुरू गोबिंदसिंघ जी की फतेह हुई । एक सचे प्रभू ने कृपा की ।

एक दूसरे सिक्के के दूसरे बाजू ये शब्द लिखे हुए थे ।:-
जरब ब-अमानु दहिर, मुसवरत शहिर जीनतु तखत, मुबारक बखत ।

भाव ये है :- संसार के शांती-स्थान शहिरो की मूरत धनभागी

राजधानी से जारी हुआ ।''

सरकारी कागज-पत्तरों और खालसा दरबार के द्वारा जारी हर दस्तावेज ऊपर नीचे मोहर लगाई जाती थी ।

अजमतिनानक गुरू हम जाहिरो हम बातन असत
पातशाह दीनो दुनियां आप सचा साहब असत

इस भावार्थ : हर तरफ (अंदर बाहर) गुरूनानक जी का ही बडापन है (कृपा है) वोही सचा साहिब है । दीन दुनिया का पातिशाह है ।

ये सिके और मोहरे बाबा बंदासिंघ बहादर के सिखराज की निशानियाँ है । बंदासिंघ बहादर ने कभी भी अपने आपको बादशाह या हाकम नही समझा । हमेशा ही अपने आप को जनता का सचा हमदर्द और दशमेश पातशाह का एक बहादर सिख बनकर उभरा । उसने सब जनता के साथ न्याय किया । सिके और मोहरे जारी करते समय भी उसने अपना नाम पीछे रखा और गुरु साहिबान का नाम सनमानित किया करते हुए प्रथम उनका नाम ऊंचा रखा । किसी भी लिखित में उनके हसियत की निजी पहचान नही है । सिख इतिहास के लेखक डॉ. गंडासिंघ के शब्दों में ''मुगलराज के सिके या मोहरे उनके निजी नामो से चलते थे । परन्तु खालसे का नेता बाबा बंदासिंघ बहादर अपने निजी नाम पर कुछ नहीं था करता ।

वो राज्य की प्राप्ती सचे साहिब परमात्मा वाहिगुरू की देन समझता था । गुरूनानक गुरू गोबिंदसिंघ से प्राप्त हुई कहता था । वे स्वयं तो उस देग और तेग का सेवादार कहता था । उसके लिये ये कृपा गुरूनानक देव जी की है और फतेह गुरू गोबिंदसिंघजी की है और पातिसाही परमेश्वर अकाल पुरुष की है । ये इतिहास में एक अनोखी मिसाल है ।

बंदासिंघ बहादर उत्तरी भारत में सदियों से कुचले जा रहे लोगों का सहारा था । उसने दीन दुनिया के दर्द मिटाने के लिये महत्त्वपूर्ण राजनीतिक और सामाजिक कार्य लोगों में कौमी हितों के लिये मर मिटने की हिंमत पैदा की । बाबा बंदासिंघ बहादर किसी भी धर्म का विरोधी नही था । उसकी सेना में कई धर्मों के लोग थे । उनमें किसी प्रकार की कोई पाबंदी नही थी । उसने अपने राज में मसजिदों और मकबरों को तोडने (गिराने) नही दिया । वो मकबरे और मस्जिदे आज भी उसी हालत में खडी है । बंदासिंघ बहादर ने

कोई कबर जमीन दोस्त नही की । इसने उलट लडाई में मारे गये । मुस्लमान मुगल सैनिको मुगल सिपाहियों का अंतिम संस्कार भी मुसलमानों द्वारा करवाया । मुगलों से उसकी लडाई धार्मिक नहीं थी ये एक राजनीतिक अंदोलन था ।

बाबा बंदासिंघ बहादरने ततकाली पंजाब पर अपनी धाक जमाई । उसके साथ साथ हरियाना उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, जंमू-काश्मिर और लाहौर तक के प्रदेशों में अपना राज कायम किया ।

बंदा सिंघ बहादर में समूचे जनरल के गुण भी विद्यमान थे । मेहनत करो, नाम जपो, और बाटकर खाओ । गुरूनानक देव जी के संदेशो को पालन करते हुए गुरू गोबिंदसिंघ के आदेशो का सन्मान सिरोधार्य था । गुरू गोबिंदसिंघ के विचार पर, **"मानव की जाति सभै एक ही पहिचानबो"** के मार्ग पर चलते हुए बाबा बंदासिंघ बहादर ने निराधारों लोगों के साथ उनकी रक्षा करते हुए सभी जनमानस को एक समान मानते थे । सभी के भले के लिये समरपित बाबा बंदासिंघ बहादर सिख धर्म में कभी न भूलनेवाला एक योद्धा था ।

अनुवादक
तारासिंघ गोरोवाडा
गुरुमति प्रकाश के सौजन्य से

"अकाल तख्त की है ललकार,
साबत सूरत सिर दसतार ।
रहिनी रहे सोई सिख मेरा,
वह ठाकूर मैं उसका चेरा ।"

सतारवी और अठारवी सदी के सिख शहीद

- हरबससिंघ चावला

किसी मुसलमान श्रद्धालू ने एक बार गुरू गोबिंदसिंघ जी से पूछा, "सचे पातिशाह इन्सानी जीवन से बढकर कोई चीज मूल्यवान हो सकती है?" तभी गुरूजी ने मुस्कराकर कहा :- "हां साई जी इन्सान का ईमान उसके जीवन से कई अधिक मूल्यवान होता है ।" और ये ईमान (धर्म, आदर्श, स्वाभिमान और आजादी) की भावना ही थी जिसने पिछले ४०० वर्षों में एक नही हजारो शहीद पैदा किये थे । जिनको याद करके आज सिख तो क्या हर भारती अपनी गर्दन उठा कर कर स्वाभिमानसे चल सकता है । शहीद की गाथा नह मिलती । शहीद देश कौम की जान और प्राण होते हैं । उनकी शहादत मुरदा कौमों की होनी को बदल के रख रख देती हे । शहीद अपने जीवन की आहुती देते है ताकी और सुख और शांती से जी सके । सिख इतिहास के श्रोमणी शहीदों ने अपने धर्म कौम और देश के लिये यही कुछ किया हे ।

भारती अतिहास में शहादत की परंपरा गुरू अरजनदेव जी से शुरू होती है । उनसे पहले पौराणिक कथाओं में भगत प्रल्हाद, भगत पूरण, जा राजा हरिशचंद्र की कथाएं तो मिल जाती हैं जो अपने धर्म के नियमों विश्वासपर दृढ रहे हों । पर हमे किसी सच्चे ऊंचे आदर्शों की किसी शहीद की गाथा नही मिलती जिसने सच धर्म और उंचे आदर्शों के लिये अपने जीवन की आहुती दी हो ।

गुरू अरजन देवजी :-

अकबर का १७ अक्तूबर १६०५ को आगरे में देहावसान हो गया । वे धर्म के मामले में काफी हद तक उद्धार और निरपक्ष थे । उसकी उद्धार नीतियों कारण कट्टर विचारों के मुसलमान उसको शक की नजरों से देखते थे । अकबर के मरते ही उसके बेटे जहांगीर ने अपनी धार्मिक नीति में परिवर्तन ले आया । गुरू अरजन देवजी को बागी शहजादा खुसरों की मदद करने के अपराध में लाहौर में लाकर उनपर बडे अत्याचार करके शहीद किया

गया । जब कि असलियत ये थी कि वो जहांगीर गुरूजी की बढती हुई मान्यता और लोकप्रियता ओर सभी सांजे आदर्शों से घबराकर किसी बहाने की तलाश में था । वो गुरूजी द्वारा चलाई गई प्रथा **"ना को बैरी ना बेगाना सगल संग हम को बन आई"** वाली झूठ की दुकान बंद कर सके ।

अब तक श्री गुरू ग्रंथ साहिबजी का संपादित हो चुका था । अमृत सरोवर तथा हरिमंदिर साहिब की उसारी ने सिख जथेबंदी को एक केंदरी स्थान से जोड दिया था । सिखों ने घोडों तथा और वस्तूओं के व्यापार में दिलचस्पी लेनी शुरू कर ली थी । मसंद प्रथा और दसवंद के कारण सिखी प्रचार और धन की आवश्यकता प्रफुलित होनी शुरू हो गई थी । इस फंड के धन से कई जगह कुएँ (बावडियां) और सरोवरों की उसारी और तरनतारन में कोढियों की देखभाल के लिये दवाखानो चलाए जा रहे थे । महमद लतीफ के अनुसार सिखों ने गुरूसाहिब जी को सचा पातिशाह कहना शुरू कर दिया था । जहांगीर को लगा ये सभ कुछ एक राज में एक नये राज के बीज फूट रहें हैं । उसने खुसरो की बगावत का सहारा लेकर गुरू अरजन देव जी को शहीद कर दिया ।

जहांगीर स्वयं अपनी तोजके जहांगिरी में लिखता है । गोईंदवाल में बिआसा दरिया के किनारे पर पीरों बजुरगों के भेस में अरजन नामक एक हिंदू था । उसने बहुत सारे भोले भाले बेसमझ और मूरख मुसलमानों को अपने तरीकोंसे (धार्मिक रहित बहित) अनुसार बनाकर अपने बजुरंगी से ईश्वर के साथ बहुत दूर तक ढोल बजा चुका था । (भाव बहुत मशहूरी प्राप्त की थी । लोग उसको गुरू कहते थे । सभ से फरेबी और फरेब के पुजारी उसके पास आ कर उस गुरू पर पूरा इतवार भरोसा जाहीर करते थे । तीन चार पिढियों उनकी ये झूठ की दुकान गरम थी । कितने समय से मेरे दिल में खिआल आता था उस गुरू को मुसलमानों के धर्म में लाना चाहिये ।

भाव वो बादशाह बनने से पहिले ही ये मनसूबे बना चुका था । अब केवल किसी बहाने की तलाश में था । यहां तक की इन्ही दिनों में ही खुसरो ने यहां का दरिया पार किया । इस जाहल आदमी (खसरों ने इरादा किया सदा ही उसके नजदीक रहे वो जगह जहां पर उसके रहने की जगह

थी । खुसरो ने पडाओ किया । जब ये बात मेरे कान पर पडी मैं आगे ही इन्हे के झूठ से पूरी तरह वाकिफ था । मैंने हुकुम किया कि उस गुरू (अरजन) को हजर करें और उसके घर घाट बच्चों को मुरतजा खांन को सपूर्द करे तथा उसकी मालमत्ता जपत करने का हुकम दे दिया और उस पर हर किसम का जुलम ढा कर डरा धमका कर उसे कतल कर दे ।

गुरू अरजन देव जी को शहीद करने की घटना १० मई सन १६०६ ई.वी. हुई ।

कहते है शहीद की मौत धर्म का नींब का पत्थर होता है, गुरू अरजन देव जी की शहादत ने धर्मी और शांतभई सिख जथेबंदी को शस्त्रधारी और संत सिपाही के रूप में तब्दील कर दिया । गुरू हरगोबिंदसिंघ जी ने मीरी और पीरी की दो तलवारे पहनकर ये आदेश जारी कर दिया कि आज के बाद मेरे सिख अच्छे से अच्छे घोडों पर स्वार हों तथा शस्त्र और जंगी सामान भेट के लिये दरबार में ले कर आयेगे । उन्होंने नौजवान और प्रेमी सिखों को शस्त्रविद्या सिखानी शुरू कर दी । सिख उन्हें सचा पातिशाह तो कहते ही थे । अकाल तख्त की रचना ने गुरू के सिखों के मनो से हकुमत और दुनिया की तख्तो का डर भय से बिलकुल दूर ही कर दिया । कविशर (ढाडी जथे) वीर रस की वारे गा गा कर सिखों में नया जोश भरने लगे । गुरू अरजन देव जी की शहादत ने सिख धर्म को एक नया मोड दे दिया था ।

श्री गुरू तेग बहादर जी

सिख धर्म और भारती इतिहास में दूसरी महान शहादत गुरू तेग बहादर जी की थी । जिन को १५ नवंबर सन १६७५ ई.वी. को दिल्ली में चांदनी चौक पर सरे आम शहीद कर दिया गया । ये शहादत इतनी अपने धर्म के लिये नही की जितनी किसी दूसरे धर्म के जलते हुअे घर बचाने की खातिर की भावना से शहादत दी गई थी । औरंगजेब की तरफ से गैर मुसलमानोंपर अत्याचार का सूर्य अपनी पूरी गमाईश और तपत के साथ चमक रहा था । राजस्थान मथरा और बनारस के सैकडों मंदिरों को गिराकर उसकी जगह मसजीदे बनाई गई थी । हिंदुओं को जबरदस्ती मुसलमान बनाया जा रहा था । उसने हिंदूओं की यात्रा पर जजिया नामक कर लगाया था । और अनेक हिंदूओंपर कई प्रकार के भेद भाव किये जा चुके थे ।

औरंगजेब चाहता था हिंदूओपर दारुल हरब,(काफरों का देश) के दारुल हरब को (इस्लामी देश) में तब्दील करना चाहता था । औरंगजेब के दमन चक्र से परेशान होकर काश्मीर के पंडितों ने अनेक जाती के हिंदू गुरूओं के दरवाजे खटखटाये आखिर गुरू तेग बहादर जी के दरबार आनंदपुर साहिब में हाजिर हुए और उनसे धर्म रक्षण की सहायता की मांग की ।

शहीद देश और कौम की जान और प्राण होते हैं । उनकी शहादत मुर्दा कौम को होनी को बदल के रख देती है । शहीद अपने जीवन की आहुती देते हैं ताकी और लोग सुख और शांती से जी सकें । सिख इतिहास के श्रोमणी शहीदो नें अपने धर्म कौम और देश के लिये यही कुछ किया है ।

गुरू तेग बहादर अपने आसाम दौरे के समय देख चुके थे कि हिंदुस्तान देश की आत्मा मर चुकी है । लोग बेसहारा निसहाय हो चुके हैं । इनकी अनख और स्वाभिमान और देश आजादी क भावना अलोप हो चुकी है ।

रणभूमि में झूजकर मरने की भावना की जगह ये लोग मुगलों के चाकर ही बनकर रह गये । अब दीन हीन और मुर्दा हो चुके लोगों की आत्मा को झंझोडनेकी जरुरत है कि कोई महान आत्मा अपनी जीवन की आहुती दे तो इस कुर्बानी के लिये गुरुतेग बहादरजी स्वयं ही दिल्ली की ओर चल पडे । दिल्ली पहुंचकर उन्हे कई प्रकार के लालच दिये गये ।

उनके मन में डर और भय पैदा करने के लिये उनकी आंखोंके सामने

भाई दयाला जी को उबलती देग में आलुओं की तर उबाल कर शहीद किया गया ।

भाई सतीदासजी को शरीर पर रुई लपेटकर उसपर तेल डालकर अग्नि लगाकर जला कर शहीद कर दिया ।

भाई मतीदासजी आरे से चीरकर शरीर के दो भाग कर दिया गया ।

इन तीनों ने अपने धरम आदर्श पर कायम रहते हुए हंसते हंसते शहादत को कबूल कर लिया । गुरू तेगबहादर ने भी हिंदू धर्म को बचाने के लिये शहीद हो गये । इस शहादत के संबंध में गुरू गोबिंदसिंघ जी बचित्र नाटक में इस प्रकार अंकित किया

"तिलक जंजू राखा प्रभ ताका, कीनो बढो कलू महि साका ।।

साधनि हेति इती जिनि करी सीस दिया पर सी न उचरी ।।"

शहीद की मौत इतनी बडी बात नही होती जितनी की उस शहादत के पीछे जो काम कर रहा आदर्श होता है । जितना महान आदर्श होगा शहीद की कुरबानी उतनी ही महान होगी । यही कारण है कि गुरू तेगबहादर और उनके साथ शहीद किये गये उनके दृढ विश्वासी में सिखों ने अपना खून बहाकर पूरे हिंदुस्तान की आत्मा को झंकोड दिया । जो सदियों से अपना सर झुकाकर अत्याचार के जुलम के आदि बन चुके थे । अब उन्ही हाथों में शमशीरे(शस्त्र) पकड कर देश के रक्षक बन गये ।

गुरू गोबिंदसिंघजी

गुरू गोबिंदसिंघजी १६७५ ई.वी. में गुरूगद्दी पर विराजमान हुए । तबी उनकी आयु केवल नौ साल की थी । उन्होंने अपने आप को समय की परिस्थितीनुसान अपने आप को तैयार किया और पहाडी राजाओं और मुगल फौजों के साथ कई लडाईयों में विजय प्राप्त की । उनके जीवन की सबसे बडी और महान घटना खालसे की सृजना थी । सन १६९९ की वैसाखी के दिन गुरू गोबिंदसिंघजी ने ऐसे शूरवीरों की कौम को जनम दिया जिन्होंने गुरूजी के बताये हुए मार्ग पर चलते हुए एक बार नहीं बल्कि कई बार पिछले ३०० साल के लंबे मौत और शहिदी का रस्ता चुन कर गरीब और मजलूम (निसहाय) जनो की रक्षा की है । देश धरम और कौम के विचारों को ऊंचा किया और गुरूद्वारों की पवित्रता और मर्यादा को कायम रखने के लिये हस हसकर जाने कुर्बान की पर धरम को आंच नही आने दी । पांच प्यारे चालीस मुकते और अनेक शूरवीर इसी सांचे के घडे हुए थे ।

मासूम बचे और शहीद सिंघनियां (सिख स्त्रियां)

गुरू गोबिंदसिंघजी के चार शहीद साहिबजादे (पुत्रों)ने मानसिक तौर पर उन हजारो माताओं को चढदी कला (सर्व श्रेष्ठ सर्वोच्च स्थान पर रखा) । जिन्होंने मीर मनू और उससे पहिले और बाद के जालम मुगल सुबेदारों के समय अपने बच्चों के टुकडे टुकडे करवाकर गलों में हार पहने और सवा सवा मन के पीसन (अनाज) पीसे । चप्पा चप्पा रोटी पर गुजारा किया फिर भी 'तेरा भाना मीठा लागे' की सर्वोच अवस्था में विचरते हुए सिखी केसो स्वासो सहित निभाई ।

गुरू गोबिंदसिंघजी ने १७०८ ई. में ज्योती ज्योत समाने से पहिले श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी को गुरू गद्दी पर विराजमान करके बाबा बंदासिंघ बहादर को सिखों का सरदार नियुक्त किया था । इस महान शहीदने अत्याचारी जालम और निर्दई हाकमो से बेगुनाहों के खून का बदला ही नही लिया बलिके सरहंद को जीत कर गुरूनानक, गुरूगोबिंदसिंघजी के नाम का सिक्का भी चलाया (जारी करके यह साबित कर दिया कि **शहीद का खून कभी व्यर्थ नही जाता ।**)

बाबा बंदासिंघ बहादर के बाद :-

मुसलमान इतिहासकारों ने बंदासिंघ बहादर के साथ इन्साफ नहीं किया । उन्होंने इस महान शहीद को तुच्छ शब्दों में याद करके उनकी अच्छाईयों को भुलाने का प्रयत्न किया बल्कि बंदा बहादर की अपार शक्ति और मुगल सामराज्य की कमजोरी और तरस योग हालत पर भी पडदा डालने की कोशिश की गई ।

समकाली इतिहासकार खाफीखां और समकालीन इतिहासकार महमद लतीफ ने तो कुत्ता, निर्दई वहिशी, इन्सानियत से गिरा हुआ खून पीनेवाला और इन्सान के रूप में शैतान लिखा है । लेकिन बंदा बहादर का सारा जीवन यही बताता है बंदा बहादर महान शूरवीर बहादूर और साहसी जनरैल था । जिसके तूफानी वेग के आगे पंजाब के मुगल हाकिम कची दिवार के समान गिरते जा रहे थे । गुरू गोबिंदसिंघ जी के आशीर्वाद और अकाल पुरुष पर अटुट विश्वास की भावना से बंदासिंघ बहादर राज की स्थापना करने के सपने लेने लग गया था । उसने कुछही वर्षों में पंजाब के प्रमुख शहरों पर विजय प्राप्त करके गुरूनानक एवं गुरूगोबिंदसिंघ के नाम के सिक्के भी प्रचलित किये । उसने उन सभी व्यक्तिओं को ढूंढ निकाला जिन्होंने गुरू तेग बहादरजी की शहिदी और गुरू गोबिंदसिंघजी के मासूम बच्चों के कत्ल करने में हिस्सा लिया था ।

पंजाब के हिंदु एवं सिखों मुगल हाकमों से (अधिकारियोंसे) होनेवाली जुल्म से बचाया ही नही बल्कि मुगल हकुमत के अजित होने के विचारों के भांडे को सरे आम फोड दिया । पंजाबियों में विशेषकर सिखों में अत्याचार के विरुद्ध टकर लेने का साहस पैदा कर दिया । गरीब की रक्षा की और गुरू

अरजन देव जी तथा गुरू तेग बहादरजी के पद चिन्हों पर चलकर असह और अति कष्टों को सहारते हुए देश की आजादी के लिये कुर्बान हो गये ।

बंदासिंघ बहादर और उसके साथिओं की अंतिम दिनों की कहानी बडी दर्दनाक है । मार्च १७१५ में बंदासिंघ बहादर अपने सिपाहियों समेत गुरूदास नंगल की गडी में घिर गया । २६ मार्च को मुगल बादशाह फुरखमिहरने लाहोर के सुबेदार अबदुल मसूदखान दलेर जंग की मदद के लिये एक भारी फौज एवं महमद अमीनखान के बेटे कमरुद्दीनखान अफरासिआवखाँ बुधेल राजा उदयसिंघ, राजा गोपालसिंघ भदोरिआ एवं कई और चुनिंदे हिंदू और मुसलमान अमीर भेजे गढी में जाने वाले सभी रास्तों की नाकेबंदी कर दी थी । किले में पहुंचने वाले को भोजन और पानी के साधनों पर रोक लगा दी गई । मोगल सेना के **३०** हजार से अधिक सिपाही दल गढी के चारो बाजू से घेरा डालकर बैठ गये । ये सभ कुछ होने के बावजूद भी उन्हे यह भय था अभी भी बंदा बहादर घेरा तोडकर भाग जायेगा । कई महिनों तक बंदाबहादर और उसके साथी गढी में उगा हुआ घास, पेडों के पत्ते घोडों पर और भार डोने वाले पशूओं का कच्चा मांस खाकर दिनही बिता रहे थे । इसके बाद पशूओं की हड्डियों को पीस पीसकर आटे की जगह वापरते रहे । कहते हैं नोबत यहां तक आई की अपने पट्टों के मांस को भून भून कर खाते रहे । एक मुसलमान इतिहासकार कामरखां लिखता है इन्होंने सभी मुसीबतों और कठिनाईयों होते हुए भी बंदा बहादर के वफादार शिपाहियोंने ८ महिने तक मुगल सिपाहियों की कोई एक न चलने दी । मुगल फौजो का मुकाबला करते रहे जभी गढी से बच निकलने का कोई मार्ग न रहा और शारीरिक तौर से असह्य हो चुके सिखो ने गढी के दरवाजे खोल दिये । सारी फौज भूखे शेर की तरह बिमार और भूक के शिकार हुए सिखों पर टूट पडी और नवाबके हुकम से **३०० सीखों** को तलवार और भालो से कत्ल कर दिया । बाद में कत्ल किये गये सिखों पेटचीर दिये गये । फिर खुले केस और दाढी वाले सिरो को भालोपर टांगे गये । बंदाबहादर के बाकी बचे हुए ७४० सिखो को लोहे की जंजिरों से जकड कर कैद कर लिया । ये घटना १७ दिसंबर १७१५ ई.वी. की है ।

गुरूदास पुर के पतन के बाद कैद किये गये सिखो और उनके जनरैल

बंदाबहादर को दिल्ली भेजने का प्रबंध किया गया । सुबेदार लाहोर न इन कैदियों को स्वयं शहनशाह को भेंट करने के लिये आज्ञा मांगी । कई सिखों को जंजिरो में जकडकर हीन और हसने लायक वस्त्र पहनाये गये और मरियल जानवरों की पीठ पर बांधकर लाहौर ले जाया गया यहां पर कैदियों को गलियों और बाजारों में ले जाकर नुमाईश की गई । फिर एक बडे जलूस के रूप में बंदाबहादर एवं उसके सिपाहीयों को जकरिया खांन कमरुदीन की अगवाईमें दिल्ली भेज दिया गया । कैदियों का ये अनोखा जलूस दिल्ली में २७ फरवरी १७१६ ई. को पहुँचा ।

इबरत नामा के लेखक के नुसार सबसे आगे हजारो सिखों के सिर भाले पर टंगे हुए थे । उनके खुले केस हवा में लहरा रहे थे । बांसों के ऊपर और भालों पर टंगे हुए थे । एक बांस के ऊपर एक बिली भली मोटी बिल्ली टंगी हुई थी । जिसका भाव ये था कि गुरुदास जंगल में हर जानदार जीव को हमने कत्ल कर दिया है । बंदासिंघ बहादर को जंजीरों से जकडा गया था । उसका मजाक उडाने के लिये उसे सुनेरी पगडी और जरी से जडी हुई फुलों की पोशाख पहनाई थी । बंदासिंघ बहादर के पीछे महमद अमीनखां का एक दुरानी अफसर संजोअ पहनी हुई हाथ में नंगी तलवार पकडे खडा था । इनके पीछे बाकी की सिख कैदी को इकठ्ठे जकडे हुए काठीरहित ऊठो पर बिठाए हुए थे । कई मुखी सिखों को भेडों भी खालके कपडे पहनाए हुए थे । कैदीओं के पीछे अमीन खां, इमरुद्दीन और जकीरखांन जहां जहां से निकलता वहां लोगों की भीड जमा हो जाती थी । कैदीओ के सिरों पर मौत नाच रही थी फिर भी सिख के अपने परमेश्वर का नाम उचार रहे थे और बेफिकर मुस्कराते चेहरे आनंद मान रहे थे । खुशी खुशी मौत को गले लगाने जा रहे थे ।

दिल्ली की मुसलमान जनता के लिये ये मनोरंजन का तमाशा था । इबरतनामा का लिखारी फिर लिखता है दिल्ली की गलियों बाजारों में इतना बडा जलूस आज तक नही देखा था । मुसलमान खुशी में समाते नही थे परन्तु सिख कैदी इस दुर्दशा के शिकार ये अभागे सिख अभी अपनी किसमत का आनंद मान रहे थे । उसके चेहरों पर उदासी या शरमिंदगी रंचक मात्र भी नहीं थी । गली में कोई मनुष्य उनपर आवाजे कसता कि उनकी ये दुर्दशा

उनकी अपनी करतूतों से हुई है । हमारे सभी दुख और कष्ट उसी के भाने में है । जो कोई कहता तुम सभी कत्ल कर दिये जाओगे । हमे बेशक कत्ल कर दो । हम सिख मौत से नहीं डरते । अगर हम डरते होते तो तुम से युद्ध कैसे कर सकते थे ? हम तो केवल भूख और बिमारी से तुम्हारे हाथ लगे है । वैसे तुम तो पहले ही हमारे हाथ देख चुके हो ।

इस तरह जलील और करने के बाद बादशाह सीअर के हुकुम से बंदा बहादरसिंघ, भाई बाजसिंघ, भाई फतेहसिंघ और बंदाबहादर के निकटवर्ती २३ साथियों को त्रिपलिआं जेल खाने में कैद करने के लिये मीर आतश इब्राहीम ओ दीनखां के हवाले कर दिया । बंदा बहादरसिंघ की पतनी, उसका तीन साल का बच्चा नाजीर दरबार खां के हुकम से शाही हरम में भेज दिया गया । बाकी के सिख कैदी को कत्ल करने दिल्ली के कोतवाल सरबराहखां के सपुर्द कर दिये गये ।

इन कैदियों को कत्ल करने का काम ५ मार्च १७१६ को शुरू हुआ । कतल करने से पहले कोतवाली चबुतरे पर लाने से पहले हर एक सिख से ये शर्त रखी जाती थी । वो सिखी त्याग कर मुसलमान हो जाये उन्हे केवल स्वतंत्रही नही, बल्के इनाम में दौलत से मालामाल भी कर दिया जायेगा ।

दिल्ली के लिये कतल का तमाशा एक हफता चलता रहा । हर रोज करीब करीब सौ सिख कतल किये जाते थे । कत्ल होने के बाद में उन लाशों को कुत्ते और गीदो को खाने के लिये कूडे के ढेर पर फेक दिया जाता था । कटे हुए सिरो को पेडो पर या शहर की उंची दिवारे या दरवाजों पर टांग देने का भाव ये था कि हकूमत लोगों के ये चेतावनी देती है कि अगर तुम सिख सजोगे तो तुम्हारा भी यही हाल होगा । जो बंदाबहादर के साथिओं का हुआ है ।

बंदा बहादर के साथी कत्ल हो गये लेकिन बंदाबहादर की मौत कुछ आगे कर दी गई । ताकी इससे कुछ छुपे राज था धन का पता लगा सके ।

आखिर ९ जून १७१६ को बंदाबहादर और उस के बाकी साथी सिख सिपाही को मौत का हुकम दे दिया गया । शहर के कई अमीर खत्रियों ने बहुत सा धन देकर बंदे को बचाने का असफल प्रयत्न किया । बंदा और उसके साथीओं को आखिर बार दिल्ली बाजारों और गलियों में फिराया

गया । कत्ल करने से पहले बंदे के आगे वही शर्त रखी 'इस्लाम या मौत' बंदाबहादर ने खुशी के साथ मौत को चुना । बंदाबहादर को इस्लाम के घेरे में लेने की बहुत कोशिश की गई । जब सभ यतन फेल हो गये तब बंदाबहादर को कतल करने का काम आतश इब्राहिमखां और कोतवाल सरबराह को सौंप दिया गया । बंदाबहादर को फिर सजाकर अच्छे कपडे पहनाकर कुतबोदीन बखतिहार काकी की दरगाह पर ले जाया गया । फिर उसे बहादर शाह दरगह पर ले जाया गया वहां उसे चौफेरा फिरा कर एक जगह बिठाया गया और बंदाबहादर के तीन साल के बच्चे अजैसिंघ को उस की गोदी में बिठाकर कहा गया तुम अपने बच्चे को स्वयं कत्ल करो जब बंदाबहादरने ये करने से इनकार कर दिया तो जलादने तेज तलवार से अजै सिंघ के टुकडे टुकडे कर दिये । उसका तडफा कलेजा निकालकर बंदेबहादर के मुंह में जबरदस्ती ठूस दिया ।

जब जलाद ये कर चुके तब बंदाबहादर की बारीआई तारीख मुजफरी के करता अनुसार एक बार बंदे के पास फिर इस्लाम या मौत का चुनाव रखा गया परन्तु बंदेबहादर ने अपने धरम को त्याग न करके मुसलमान बनना स्वीकार नही किया बल्कि मौत को गले लगा लिया ।

बंदासिंघ बहादर के बाद :-

बंदासिंघ बहादर की शहिदी के बाद सिखो को पकडना शुरू हो गया । गांव के चौधरी और परगना के मुखियों को आदेश जारी कर दिये गये । की जहां कहां भी सिख नजर आये उसे पकडकर लाहौर भेज दिया जाये । सिखों के सिरों की कीमत रख दी गई । एक सिख के सिर कत्ल करनेवाले को एक कबल पता बतानेवाले को १० रु. सिर काटकर लाने वाले को ८० रू. इनाम दिया जायेगा । ऐसा लगता है जैसे किसी ने पंजाब के मैदान सिखो के खून को परोसकर ये विशाल धरतीरूपी एकथाल हकुमत के आगे रख दिया हो । पर पता नही सिख किस मिटी के बने हैं कि ये अत्याचार सहकर भी कतल होकर भी तहस बहस हो कर भी बढते जा रहे हैं । हकूमत अपने आपको सिखों के सामने बेबस और थकी महसूस कर रही थी ।

अबदूस समद से अब्दाली तक का समय

बंदा बहादर की शहिदी पर अहमदशाह अबदाली के आखिरी हमले

के बीच जून १७१६ से १७६९ इ.वी. तक सिखों को अनेक कुरबानियां देनी पडी । छोटे और बडे घलूघारी में हजारो सिख (जवान बच्चे और वृद्ध तथा औरते) शहीद कर दिये गये । भाई मनीसिंघ, भाई तारुसिंघ, भाई शाहबाजसिंघ, भाई तारा सिंघ वां, भाई बोतासिंघ, भाई सुबेगसिंघ, भाई सुखासिंघ, भाई महताबसिंघ, भाई हाठुसिंघ, भाई निहंगसिंघ इत्यादी शहीद इसी समय वीरगती को प्राप्त कर हो गये । जिनों के बारे में हम नितापती अरदास में (प्रार्थना में) याद करते हैं । जिनों ने बंद बंद कटवाये, अपनी शरीर की खलडी निकलवाई, कीमा कीमांकिये गये पर सी तक न उचारी सिखी केसो तथा स्वासों तक नि भाई उन शूरवीर सिख शहीदों की नेक कमाई ध्यान धर कर खालसाजी साहिब बोलो जी वाहिगुरू ।

जहां ये सिख शहीदों की कुरबानी की हमें याद दिलाते है वही उसी के साथ ही मुगल और अफगान की सुबेदार की बरता की दास्तान भी कहती हैं कि धार्मिक संकीरता और राजसी तक्त के नशे में अंधे होकर इन्सान किस तरह मार्ग से गिर सकते हैं । पर धन्य है वे शहीद जिन्होंने अपनी कुर्बानी देकर सच, धरम और आजादी की ज्योति को जलाये रखते हैं ।

शहीद भाई गुरबाक्ष सिंघ जी

अठारवी सदी का पूरा सिख इतिहास वीरता, साहस और कुरबानी की झकियां बेमिसल पेश करता है । ये वो समां है जब गुरू के सिखों ने केसो की पवित्रता और धरम की मर्यादा को कायम रखने के लिये बंद बंद कटवाये कीमी कीमा किये गयें चरखडियों पर चढाये गये । आरियों से चिराये गये, खोपडीयां उतरवाईयां असह कष्ट सहारे शहिदीयां पा गये पर मुंह से सी तक न उचारी । ऐसा ही आचरण पंजाब की शूरवीर स्त्रियों ने पेश किया । जब उनके बच्चो को उनके सामने काटे और चीरे मारे गये उनके टुकडे टुकडे करके उनके हार बनाकर उनके गलो डाले गये, मीर मनू की जेल में सवा सवा मन आटा पीसा गया और चपाचपा रोटी पर दिन गुजारे गये । पर धरम की आन और शान को बरकरार रखते हुए हस हस कर कुर्बानियां दी । सिखी आचरण भी जो सीख हमें पहले और दूसरे घलूघारे (युद्ध) में प्राप्त की थी । सिख कौम उन शिखरों पर फिर से दुबारा नही पहुंच सकी । उस समय सिखो की राजनीति धरम पर थी । पर आज का धरम राजनीति के अधीन हो चुका है ।

कौम ने संकटो के मार्ग से निकलकर पंजाब का राज्य और पातिशाही हासल की थी पर राजसी सता आ जाने से धरम और सिखी की मर्यादा दूर हो गई थी । अब हमारे पास न धरम है न मर्यादा ।

फरवरी १७६२ में हुए बडे घलूघारे (युद्ध) के बाद अहमदशाह अबदाली ने समझा अब सिख कौम तो मरी पडी है । एक ही दिन मे ४० हजार सिखों के खून से हाथ रंग कर और हरिमंदिर की इमारत का भंग करके वो वापिस काबूल चला गया । उसके वापिस जाने की देर थी की बच्चे खुचे सिख छुपे स्थानो से निकलकर पंजाब में इस तरह विचरने लगे । मानो वहां पर कोई घटना घटी ही न हो । उन्होंने सभी मिलाकर दरबार साहिब हरिमंदिर की इमारत को फिर से खडा कर दिया । १० अप्रैल १७६३ की बैसाखी श्री अमृतसर में बडे प्यार एवं उत्साह से मनाई । अहमदशाह अबदाली ने सिखों की बढ रही शक्ति को रोकने के लिये अपने जनरैल जहानखां को अमृतसर भेजा पर अमृतसर पहुंचने से पहले ही वो सिखों से मार खाकर पेशावर भाग गया । अहमदशाह अबदाली अफगाणिस्तान के रास्ते में उलजा हुआ था । इसलिये सिख नये सिरे से जथेबंदी एवं इकठ होने का समय मिल गया ।

अहमदशाह अबदाली जिसने अब तक छे बार हिंदुस्तान पर हमला करके मुगल एवं मराठा शक्ति को तहस नहस कर दिया था । सिखों की बढ रही शक्ति को कैसे बरदाश कर सकता था । जहानखांन की हार उसको सिखों की चुनौती के रूप में दिख रही थी । वो सितंबर १७६४ सिखों को सजा देने के लिये अेक बार फिर काबूल से चल पडा । उसने १८००० से अधिक शिपाही साथ थे । रास्ते में उसके कलात के सुबेदार नसीरखान को साथ शामिल होने के लिया कहा । जब नसीरखान ने हज जाने की मजबुरी बताकर शामिल होने से इनकार कर दिया । तब अहमदशाह अबदाली ने उसे गुस्से से चेतावनी के रूप में चिठ्ठी लिखी और कहा मक्का जाने का क्या लाभ । जब पंजाब में काफिर उधम मचा रहा है । मक्के के हज जाने के इनके विरुद्ध जहाद करना कई दर्जा पुन का काम है । तुम कतार ही तरफ से हमला करो और मैं काबूल की तरफ से हमला करता हूँ ताकि इन काफिरों को कढी सजायें देकर इनके बच्चे और औरतों को गुलाम बनाकर ले जा सके । अहमदशाहने अक्तूबर १७६४ में सिंधपार किया एवं अेमनाबाद तक पहुंचते ही नसीरखान की १२००० बलोची सिपाही ले कर अबदाली को आ कर मिल गया ।

अबदाली शाह ने सबसे पहले लाहौर पर अधिकार किया । फिर अमृतसर की तरफ बढने की तैयारी करने लगा । उसको खबरीने बताया कि सिखों की बहुत बडी संख्या श्री अमृतसर में है । पर जब सिखो ने अहमदशाह अबदाली का आना सुना तो वे नगरी छोडकर जंगलो में गुप्त स्थानों पर चले गये । श्री अमृतसर में केवल ३० सिख ऐसे रह गये जिन्होंने दरबार साहिब की रक्षा सिखी आचरन को जिंदा रखते हुए अबदाली की सेना से लडते हुए शहीद होने का प्रण किया था इनके जथेदार स: गुरबक्षसिंघ थे ।

जिस तरह अठारवी सदी के और प्रमुख शहीदों की जानकारी उपलब्ध नही उसी तरह शहीद स: गुरबक्षसिंघ जी के बारे में इतिहास सरोत चुप ही है । भाई काहनसिंघनाभा महान कोश के पन्ना ३१५ लिखते हैं कि गांव लीन जिल्हा श्री अमृतसर के वसनीक थे । रतनसिंघ भंगू ने ये गांव खेमकरन (अब पाकिस्तान के नजदीक है) भाई गुरबक्षसिंघ जी ने भाई मनी सिंघ के करकमलो द्वारा अमृत की दिक्षा ली । इनकी गनना उन दिनो चुने हुए शूरवीरों में गिनी जाती थी । ये सदैव नीलवस्त्र धारन करते थे । सवेरे उठकर स्वच्छ पानी से स्नान करना । बाणी का पाठ करना तथा शस्त्रों की पूजा करना ये इनका नित्य काम था । आप जत सत के पूरे तथा सिखी रहित मरियादा के परिपक्व थे । दीन दुखियों की रक्षा करने के लिये अपना खून बहाने के लिये सदैव तैयार रहते थे । धरमयुद्ध का नाम सुन कर आपको चाव से खुशी होती थी ।

सिखों के ऊपर बिपता आये समय दुश्मन के सन्मुख लडना आपका कर्तव्य बन गया था । यही कारण था जब अहमदशाह अब्दाली ने श्री अमृतसर की आने की खबर सुनी तो ये गुप्त स्थानों से निकलकर अकाल तख्त पर शहीदी देने के लिये पहुंच गये । ताकि पानीपत के विजेता को दिखाया जा सके उनके मन पर ३०००० फौजों का जरासा भी भय नही है ।

स: गुरबक्षसिंघ और उनके साथीयों के सबसे पहले स्नान करके नये वस्त्र पहनकर शरीर पर शस्त्र सजाकर इस तरह तैयार बर तैयार थे जैसे कोई लाडा अपनी लाडी मौत से विवाह करने चला हो वो अकाल बुंगे से नीचे उतरे प्रभू का नामस्मरण करते हुए नगारे बजाते दरबार साहिब पहुंचे । हाथ में केसरी निशान साहेब पकडे हुए स: गुरबक्षसिंघ सब से आगे थे । वाहिगुरू

के आगे अरदास करके कि सिखी केसोस्वासो सहित संग निभे ।

उन्ही दिनों में सिख चढदी कला में विचरते थे । उनके मनमें इस बात का दृढ विश्वास था धरम की राह पर चलते हुए शहिदी प्राप्त की तो गुरुजी की गोद प्राप्त होती है । अगर जीते रहे तो राज प्राप्त होगा । दरबार साहिब के दर्शन करने के स. गुरबक्षसिंघ अकाल तख्त के बुंगे में आ गये । स: गुरबक्षसिंघ के चेहरे पर इस तरह की खुशी थी जैसे एक सुंदर सी लडकी की कल्पना करके नये लाडे के मन में होती है । वो मौतरूपी लाडी की प्रतिक्षा कर रहा था ।

कितनी हैरानी की बात है जिस अहमदशाह अबदाली ने १७६२ में बडे घलूघारे के समय में १५० मील का सफर दो दिनों में पूरा कर दिया था । अब उसे लाहौर से अमृतसर पहुंचने में ५ दिन लग गये । राह में गुप्त स्थानो से निकलकर सिख उसके फौजी दस्तों पर हमल करते थे । काजी नूर महमद जो कि अहमदशाह अबदाली के साथ आया था । जंगनामे में लिखता है की काफरसिख गाजियों पर दूर दूर हमला करते थे और घर भाग जाते थे । जब अहमदशाह अब्दाली अमृतसर पहुंचा तब सिख गुरू का चक छोडकर जा चुके थे केवल वो ही सिख ३० अकाल बुंगे में बैठे थे । जिन्होंने स: गुरबक्षसिंघ की कमान में शहीद होने का प्रण किया के दरबार साहिब में शहीद होने की अरदास (प्रार्थना) की थी ।

अबदाली ने आते ही दरबार साहिब को चारो बाजूओं से घेर लिया । उसे आस थी सिख भारी संख्या में होंगे । और वो उनके खून से हाथ रंग लेगा और अपने मन की प्यास बुझा सकेगा ।

पर हुआ इस के विपरित काजी नूर महमद जिसने अबदाली के इस हमले को अपनी आंखों से देखा था वो जंगनामें लिखता है कि जब शाह अबदाली अमृतसर पहुंच तो उसे कोई भी सिख नजर नहीं आया सिवाय थोडेसे आदमी के इलावा जो रामगढ (अकाल तख्त) के किले में शहादत के लिये तैयार थे । जिन का यही मनोरथ था कि हमारी जान गुरू को अर्पण हो जाए । जब उन्होंने अहमदशाह के लष्कर को देखा तो वे निडर हो कर किले के बाहर आ गये । और अपने धर्म पर कुरबान होने लगे । काजी नूर महमद आगे लिखता है वो गिनती में केवल ३० थे । पर नतीजे से बेपरवाह होकर उन्होंने मौत को खेल समझा । उन्होंने गाजियों के साथ आमने सामने

हाथो हाथ लडाई की और एक एक करके सभी मारे गये ।

दुरानी ने उनकी इमारतों दरबार साहेब और अमृतसर (तख्त) गिरा दिया और शहर लूट कर लाहौर को वापिस ही मुड गया ।

काजी नूर महंमद गुरबक्षसिंघ का नाम नहीं लिखता पर रतनसिंघ भंगू ने इस लडाई का वर्णन करते हुए लिखा है जब निहंग सिंघ (गुरबक्षसिंघ) ने देख लिया कि अबदाली के सैनिक प्रकरमा में पहुंच गये हैं । उन्होंने अपने जथे के सिंघों को संबोधित करते हुए कहा (भाला) पकडकर वैरी दलपर टूट पडो और जैकारे छोडते हुए और युद्ध करते हुए शहीद हो जाओ । उनका हुकम सुनतेही सिंघ शेरोंकी तरह निकले वैरीदलो (हिरनो) पर टूट पडे । सिंघ मारो मारो का शोर मचाते रहे थे । पर स: गुरबक्षसिंघ अपने साथियों को आगे बढकर शहीद होने की प्रेरणा दे रहे थे ।

थोडे से सिंघ आखर कितना समय ३० सिख ३० हजार सेना का मुकाबला कर सकते थे । वो पलो क्षणों में बिजली की चमक के समान वैरी दलपर टूट पडे । वैरी दल में तबाही मचा कर शहादत के जाम को पी गये ।

इन्ही समय में ही अेक और प्रमुख शहीद बाबा दीपसिंघ जी थे जो अहमदशाह अबदाली की फौजों से लोहा लेते लेते अपने ५०० सौ साथियों के साथ अमृतसर सरोवर की प्रकर्मा में पहुंचकर शहीद हो गये थे ।

इन शहीदों की कुरबानी ने जहां सिख धरम को मजबूत किया वहां कौम को ऐसा बल प्रदान किया जिस खालसे की सृजना गुरू गोबिंदसिंघ सन १६९९ की वैसाखी के दिन की थी वो ही खालसा पूरे पंजाब (अटक से दर्या सतलुज तक) का हाकम (अधिकारी) बन गया ।

उनीसवी सदी और बीसवी सदी

जो आदर्श गुरूगोबिंदसिंघ ने अठारवी सदी में अपने सामने रखा था उसी आदर्श के अंतरगत उन्नीसवी सदी के मध्ये में स: शामसिंघ अटारी और बीसवी सदी के शुरू में गुरूद्वारा लहर के समय स: लक्ष्मणसिंघ, स: दलीपसिंघ और अनेक सिघों ने अंगरेजो की लाठीयां और महंतो की तुच्छ हरकतों के कारण ही झाडियों से बांधकर जीते जी जला दिये गये पर शहीदों ने गुरूद्वारो की पवित्रता को आंच नही आने दी । देश की आजादी के लिये कुर्बान होनेवाले बबर अकाली स: भगतसिंघ, स: उधमसिंघ, स: करतारसिंघ सरांभा किसी को भूले नहीं । गद्दर लहर के जिस पत्रको स: करतारसिंघ

सरांभा संपादित करते थे उसमें ये इतिहास छपा करता था ।

आजादी मांगने से नही मिलती । बहादुर लोग अपने जोर से आजादी लेते हैं । डरपोक लोग तो मिली हुई आजादी को कायम नही रख सकते । जेकर बहादुर बनना है तो गद्दर करो जे कर गद्दर करना है तो सिर पर कफन बांध कर मैदाने जंग में आ जाओ । देश तुम्हारा इंतजार कर रहा है । (१० मई १९१४ गद्दर पत्र) ये इशीतहार छपा था । जरुरत है जरुरत है निडर और बहादर शिपाहियों की तनखाह मौत इनाम शहिदी पेनशन आजादी मैदान मुकाम इस इशितीयार को छाप कर स: करतार सिंघ संराभा सायकल पर ले जाकर घर घर बांटता था ।

ताजे युद्धों में शहीदी की परंपरा को स: दर्शन सिंघ के समान निहंग फौजा सिंघ १९८४ घलूघारों में शहीद हुए । हजारों हजारों शहीद सिंघो और विरांगनायें गुरुद्वारो की पवित्रता और शब्द गुरू के सत्कार को बनाये रखने की खातिर कुर्बानियाँ देकर ये साबित कर दिया कि सिंघों में शहादत की परंपरा आज जीती जागती है । जो कौम शहीद पैदा करने की समस्या रखती है । उस कौम को किसी भी समय की सरकार दबा नही सकती । धन्य हैं वे शहीद जिन्होंने देश की आजादी तथा स्वतंत्रता के लिये जिन जवाने अपनी शहादत दी है उन्हे मेरा कोटि कोटि प्रणाम ।

अनुवादक
- तारासिंघ गोरोवाडा

आखिर में मैं तो यही कहूंगा ।

खुद काटों पर चल कर तुमने स्वयं पिये दुखों के जाम ।
धन्य धन्य मेरे देश के वीरों तुम्हें लाख लाख प्रणाम ।।

देश की खातिर मरनेवालो तुम्हें दिल से भुला सकते नही
बरस तो क्या सदियों तक हम ये कर्ज चुका सकते नहीं

- तारासिंघ गोरोवाडा 'जाचक'